बापू-स्मृति-ग्रन्थ

[राष्ट्र-पिता को अर्पित हिन्दी के कवियों की श्रद्धाञ्जलियाँ]

सम्पादक—

श्रीकृष्ण 'सरल'

प्रबन्ध सम्पादक—

नारायण श्यामराव चिताम्बरे

भूमिका—

रामप्रकाश मलहोत्रा

समर्पण !

बापू ! तुमने किया राष्ट्र में नव-जीवन संचार
और तुम्हीं ने दिया हमें यह भावों का संसार,
आशा है सस्नेह करोगे हे युग के अवतार !
माँ वाणी के भक्तों की यह श्रद्धांजलि स्वीकार ।

'सरल'

विश्ववन्द्यं गुणागारं जगद्विस्मय कारकम् ।
पुण्यश्लोक महात्मानं सर्वदा प्रणमाम्यहम ॥
सत्याग्रह सुमंत्रस्य सृष्टारं सत्य सुन्दरम् ।
महनीय वरं वन्दे 'मोहनं' मोह-नाशकम् ।

—सूर्यनारायण व्यास

श्री मद्भागवतं रहस्यममृतं पीत्वा महत्तेजसं ।
स्वच्छन्दं प्रति भारतं विदध तश्शान्त्या समंभागतम् ॥
ज्ञानं यस्य भविष्यदुज्वलमहो संस्तूयतेऽलौकिकं ।
वन्दे तं प्रतिभाविभाकरमसुं ज्ञानेश्वरं गान्धिनम् ॥

—श्याम शर्मा

प्रवेश

Generations to come, it may be scarcely believed that such a one as this ever in flesh and blood walked upon this earth.—

Prof. Albert.

तीस जनवरी को राष्ट्र-दीप बुझ गया। हमारे बापू हमसे बिछुड़ गये। मानवता का पुजारी दानवता का शिकार हुआ। अहिंसा का अवतार हिंसा की बलिवेदी पर चढ़ा दिया गया। सत्य की साकार मानव-मूर्त्ति को असत्य की राक्षसी सुरसा निगल गई। राष्ट्र-पिता की हत्या एक राष्ट्र-पुत्र ने ही की। बापू शहीद हो गये। विधि के विधान की विडम्बना भी कितनी विचित्र है !!

राष्ट्र-दीप बुझ तो गया किन्तु निर्वाण से पूर्व अपनी अन्तिम लौ को इस प्रकार जगमगा गया कि सम्मुख फैला घोर अन्धकार उस दिव्य ज्योति के प्रखर प्रकाश से तिरोहित होकर मानवता की पगडंडी आलोकित हो उठी। उस पावन-प्रकाश-पुञ्ज की वह अन्तिम तेजोमयी किरण मानव-जीवन-मार्ग को स्पष्ट से स्पष्टतर कर गई। मानवता के इस पथ को उस महा मानव ने दधीचि के समान अपने जीवन-दान की स्फटिक शिलाओं द्वारा निर्मित कर, छांहके लिये अपने रक्तसे सींच त्याग के वृक्ष लगाये और जिन पर नैतिकता की अमर बेलि को फैला दिया, जो धूप, वर्षा, आँधी से मानवता का सतत बचाव करती रहेगी। तभी महायोगी अरविन्द ने कहा—"प्रकाश-पुञ्ज लुप्त हो गया किन्तु उसका प्रकाश अभी भी तेजोस्भासित हो हमें मार्ग-प्रदर्शन कर रहा है।"

ऐसे गाँधी की हमने हत्या की। यह महापाप किसी भी महान त्याग, पावन कर्म आँसू भरे पश्चाताप के त्रिवेणी नीर से धुल मिट नहीं सकेगा। यह कालौंच का टीका हमारे इतिहास के सिर पर ऐसा ही लगा रहेगा, क्योंकि 'हम गुनहगार हैं, जो गाँधी की, अपनी श्रेष्ठ-तम निधि की रक्षा नहीं कर सके। पहले हमने इसकी आत्मा को कुचल जाने दिया और अन्त में उसका शरीर भी हमारे देखते-देखते छलनी हो गया।" ❀

समय-समय के युग-पुरुषों के भाग्य, आज तक यही उदाहरण प्रस्तुत करते आये हैं। आज से लगभग २,७०० वर्ष पूर्व फारस के लोगों ने अपने पैग़म्बर 'ज़रथुस्त' को 'अहुर्तत्व' की पूजा करते हुए क़त्ल कर दिया। २,५०० वर्ष पूर्व यूनान ने, स्नेह की प्रतिमूर्ति सुक-रात को प्रेम का प्रचार करने पर विष पिला दिया। २००० वर्ष पूर्व नेज़ारथ निवासी शान्ति-स्वरूप, ईशदूत ईसा को क्रॉस नसीब हुआ था। प्रजातंत्र की आत्मा इब्राहिम लिंकन की पावन आत्मा के साथ यही न्याय बरता गया था। 'अनहलक' की आवाज़ बुलन्द करने वाले सरदार मन्सूर की हत्या तो और भी अधिक हृदय को कँपा देने वाली है। हमारे इतिहास के पृष्ठ भी इस प्रकार की अनेक रक्त-रञ्जित घटनाओं से सने हैं। कर्मयोगी कृष्ण, युग-प्रवर्तक दयानन्द और अन्त में मानवता की अमर ज्योति बापू इसके प्रबल प्रमाण हैं।

हमने उसकी हत्या की कि जो हमारा रफ़ीक़ था, देवता था, जो आजीवन हमारे कल्याण के लिये सतत संघर्ष करता रहा। जिसने स्वतंत्रता का वह गगन विचुम्बित भव्य भवन हमें दिया कि जिसकी नींव उसने अपने रक्तदान से खड़ी की थी। जिसके स्वर्ण-स्तम्भों को अपने अथक परिश्रम के स्वेद से पोता और जिसके एक-एक कक्ष को त्याग, तपश्चर्या और बलिदान से सजाकर हमें दिया। अन्त में इस

❀ जवाहरलाल नेहरू।

प्रभामयी इमारत को अपनी अस्थियों का टेका लगा और भी अधिक मजबूत बना गया कि युग-युग तक यह भवन तूफान के थपेड़े व सैलाब के प्रवाह को सहता अचल खड़ा रहे।

संसार का इतिहास बताता है कि महापुरुषों के जीवन-निर्माण में काल और परिस्थिति के संघर्ष का बड़ा हाथ रहा है। उनका जीवन एक प्रतिक्रिया सी होती है "जब-जब अत्याचारों की पराकाष्ठा होती है, तब-तब एक महापुरुष का जन्म होता है और वह अत्याचारों का दमन कर सत्य की स्थापना करता है।"× अभिप्राय स्पष्ट है कि राष्ट्र में होनेवाले अत्याचारों की प्रतिक्रिया सदैव एक अलौकिक, युग-प्रवर्तक महापुरुष का निर्माण करती आई है। उस महापुरुष ने सदैव ही अत्याचारों के विरुद्ध विद्रोह का शंख फूँका है। वह सदैव ही अपनी चिता के साथ उस बढ़ते हुए अत्याचारों के शाप को भी भस्म करता रहा है। यही इतिहास की पुनरावृत्ति हमारे यहाँ भी हुई है। दासता की साम्राज्यवादी लौह-शृंखलाओं में जकड़ी राष्ट्र की आत्मा जब शोषण के शिकंजे में छटपटा उठी और नित्यप्रति के अत्याचारों की पराकाष्ठा से जब वह त्राहि-त्राहि पुकार चीत्कार कर उठी तब प्रतिक्रिया स्वरूप २ अक्टूबर १८६९ को पोरबन्दर में काबा गान्धी के यहाँ क्रान्ति के अग्रदूत गान्धी का जन्म हुआ, जिनके इन्कलाबी व्यक्तित्व से साम्राज्यवादी मञ्जिल की नींव डगमगाने लगी और जब उस क्रान्तिकारी व्यक्ति ने सत्य का शंख फूँक, अहिंसा का शस्त्र ले, उस साम्राज्यवादी गढ़ पर, सत्याग्रह और असहयोग के प्रचण्ड प्रहार किये तो वह ढह गया।

"........Gandhi is greatest among all the great of ----"*

संसार के इतिहास में अनेक महापुरुष हुए किन्तु एक उदाहरण भी ऐसा नहीं जिसकी तुलना गान्धी से की जा सके। उनमें और गान्धी में सबसे बड़ा अन्तर यह है कि समकालीन विरोधी विचार रखने वाले विद्वानों ने किसी भी महापुरुष को इतनी श्रद्धा से नहीं पूजा जितनी कि गाँधी के समकालीन विचार रखने-वाले विद्वानों ने उनकी पूजा की। उनकी सबसे बड़ी विजय इसी में है कि विरोधी विचार वाले लोग भी अपने साध्य के लिये उनके ही बतलाये मार्ग व साधनों का उपयोग करते हैं। इसके अतिरिक्त गान्धी में एक और विशेषता है जो अन्य किसी में नहीं पाई जाती। संक्षिप्त में उसे गान्धी का 'बापू रूप" कहा जा सकता है। कोई भी व्यक्ति किसी भी धर्म, जाति, श्रेणी, अथवा राजनैतिक विचारों का हो 'बापू-मय-गान्धी" के प्रेम का पात्र है और गान्धी के "बापू-मय रूप" को प्यार भी करता है। राजनीति, दर्शन अथवा धर्म में गान्धी के विचारों से मतभेद रखने वाले एक नहीं अनेक विचारक मिल सकते हैं। किन्तु ऐसे व्यक्ति तो उँगलियों पर गिने जा सकते हैं कि जिनका मानस गान्धी के 'बापू रूप' से रञ्जित न हो। गान्धी के 'बापू रूप' गान्धी के चरित्र, गान्धी के आत्म-बल की सत्ता उनके कटु से कटु आलोचक ने स्वीकार की है। "....उनके सामाजिक, राजनैतिक, अध्यात्मिक या अन्य सिद्धान्तों में कई एक के साथ लोगों का मत-भेद हो सकता है उसी प्रकार विद्वत्ता में भी उन्हें पीछे हटा देने वाले अनेक विद्वान मिल सकते हैं किन्तु शील एवम् चरित्र की जो महत्ता गान्धीजी में है उस विषय में मतभेद की कोई गुञ्जायश नहीं रह जाती।"[1]

"गान्धी, पूर्व की आत्मा की योग्यतम प्रतिमूर्ति है"[2]

---

१ अग्रलेख—केशरी १६१८ 'तिलक'

२ रवीन्द्रनाथ टैगोर

इन खासानी विशेषताओं के साथ दो बातें और हैं जो कि सार्वजनिक सेवा के जीवन में गान्धी की देन है। एक है 'सेवा की सामूहिक निःस्वार्थ त्यागमयी भावना" और दूसरी है 'अभय'। और 'अभय' ही वस्तुतः अहिंसा है, क्योंकि भय ही हिंसा का मूल कारण है। दूसरों को उपदेश करने के पूर्व उन्होंने स्वयम् 'निस्वार्थ सेवा' को तथा 'अभय' को अपने जीवन में अपनाया। '........His very life is another name for sacrifice ...He covetsno power, no position, no wealth, no name and no fame. Offer him the throne of all India, he will refuse to sit on it.........His soul is perpetually anivious to give and he expects absolutely nothing in return—not even thanks."

".........He is a librated soul. If anyone strangles me, I shall be crying for help, but if Gandhi were strangled, I am sure he would not cry. He may laugh at his strangler, if he has to die he will die smiling............"[1]

वर्षों पूर्व रवीन्द्र बाबू की यह भविष्यवाणी गांधीजी के जीवन में नितान्त सच्ची उतरी। हत्यारे को हाथ जोड़ कर अभिवादन करते हुए बापू के दिव्य रूप का रविबाबू को जैसे पूर्व से ही आभास हो गया हो, गांधीजी का 'अभय' उनके जीवन के पल पल में भासित होता है। नोआखाली-यात्रा, कलकत्ता की उत्तेजित भीड़ और हाल का बम-केस व लाहौर-यात्रा की तैयारी जैसे अनेक उदाहरण प्रस्तुत किये जा सकते हैं।

गांधी विश्व-बन्धुत्व व प्रेम के अमर सन्देश-वाहक थे। उनकी सर्व-धर्म-सहिष्णुता में ही उनका विश्व-बन्धुत्व निहित था।

धर्म या मजहब कोई भी हो, किसी का भी हो उनके लिये परम पूज्य था वन्दनीय था। एक महान् धार्मिक तथा आध्यात्मिक होते हुए भी गांधी जी ने अपने धार्मिक और आध्यात्मिक सिद्धान्तों को प्रसारित और प्रचारित करते समय सदैव इसका ध्यान रखा कि उनके सिद्धान्त किसी प्रकार का भिन्न रूप ले मतमतान्तरों के वृक्ष में एक और टहनी उत्पन्न न कर दें। यदि गांधी जी तनिक भी इच्छा करते तो विश्व के महान् नवीन धर्म-प्रवर्तकों तथा धर्म-गुरुओं की माला में मणि के स्थान को सहज ही प्राप्त कर लेते, किन्तु उनके लिये तो सर्व धर्म समभाव थे। उनका दृढ़ विश्वास था कि सब धर्म एक ही बात कहते हैं केवल उनमें शाब्दिक विभिन्नता ही है। बापू का यह कदम केवल दूरदर्शितापूर्ण ही नहीं राष्ट्र के भले के दृष्टिकोण से भी अत्यन्त विचारपूर्ण था। यदि इस दृष्टि-बिन्दु को विश्व के अन्यान्य आध्यात्मिक धर्मगुरुओं ने अपने सिद्धान्तों का प्रतिपादन करते समय व्यवहार में रखा होता तो संभव है आज ईशु के नाम पर ईसाई, बुद्ध के नाम पर बौद्ध, मुहम्मद के नाम पर इसलाम मूसा के नाम यहूदी, जो राष्ट्र के नाम पर पारसी आदि भिन्न भिन्न डालियों के रूप में फूट, विश्व में धार्मिक विद्वेष की भीषण कलह का कारण न बनते। इतना ही नहीं, धर्म के अन्दर धर्म और मत के अन्दर मतान्तरों ने जो कलह का इतिहास प्रस्तुत किया है उसे देखते हुए शंका होने लगती है कि क्या मनु की सन्तान और पशु में भी कोई अन्तर है।

ईसाइयों के अन्दर कैथोलिक व प्रोटेस्टन्ट; एंग्लिकन व [illegible]; इसलाम के अन्दर शिया व सुन्नी और शियाओं इसमाइली और दाउदी; बुद्धों में हीनयान और महायान, हिन्दुओं में शैव व वैष्णव; आर्यसमाजी व ब्रह्म समाजी; सिख व जैन; जैनों में श्वेताम्बर व दिगम्बर, और फिर उनमें तेरह पंथी व बीस पंथी, मन्दिर वाले व स्थानक वाले तथा इनके अतिरिक्त

कबीर पंथ, रामानन्दी पंथ, वल्लभाचार्य का पंथ, तो दादू दयाल का पंथ, वाम पंथ तो सखी सम्प्रदाय और तिस पर हाल काराधास्वामी पंथ—इस प्रकार धर्म व मत-मतान्तरों का खिलवाड़ बना हमारे धर्म-गुरुओं ने जो भयङ्कर भूल की, उसे गांधी जी ने दोहराया नहीं बल्कि एक सीमा तक उसका निवारण ही किया। गांधी जी का धर्म के रक्तिम इतिहास के अध्ययन से हृदय विगलित हो उठा था। उनका हृदय मानव के दानव रूप को देख सहम गया था व धर्म के नाम पर अत्याचारों की इस नग्न खून की होली और प्रति-शोध की भट्टी में जलती मानवी आत्मा की पीड़ा से कराह उठा था। यूरप के राजनैतिक रंगमंच पर धर्म की आड़ ले ईसाइयों ने कैसी हृदय विचलित कर देने वाली रक्त की नदियाँ बहायीं। इसलाम के नाम पर करबला में धर्मान्धों ने दानव रूप ले कैसा पाशविक हत्याकाण्ड किया। हाल ही में धर्म के नाम पर पंजाब व नौआखाली, बिहार व दिल्ली में कैसे कलंकित इतिहास का निर्माण हुआ कि जिसका सानी विश्व इतिहास में नहीं मिलता, और जिसकी लज्जा से हमारा सिर ऊपर को नहीं उठता। बापू की हत्या का कारण भी तो यही मजहबी पागलपन है।

गांधी जी के सिद्धान्तों में इस असाध्य रोग कि एक रामबाण औषध है और वह है 'सर्व-धर्म-समभाव'। गांधी इसी के लिये जीवित रहे और इसी के लिये मरे। जिस साम्प्रदायिकता के जहर को उन्होंने कौम की रगों से दूर करने का प्रयत्न किया उसी ताअस्सुबी नाग ने उन्हें डस लिया। जिस हिंसा की हिंसा करने के लिये उन्होंने आजन्म संघर्ष किया उसी तशअ्दुम के वे अन्त में शिकार हुए—

"मेरे गांधी जब जमीं वालों ने तेरी कद्र कुछ कम की

जिस घृणा ने गांधी जी का अन्त किया उस घृणा से ही उन्हें घृणा थी। वे कभी किसी को घृणा नहीं करते थे। उन्होंने कभी घृणा का उपदेश नहीं दिया। भारत को साम्राज्यवाद के फौलादी शिकंजे में जकड़, निरन्तर शोषण करने वाले अँग्रेजों से भी उनके हृदय में घृणा उत्पन्न नहीं हुई। साम्राज्यवाद का प्रचण्डतम विरोध तथा उससे आजीवन संघर्ष करते हुए भी वे अँग्रेजों से प्रेम ही करते रहे। उन क्षमा की मूर्ति बापू ने प्राण-घातक हमला करने वाले पठान मीरआलम[1] को भी क्षमा कर दिया। अभी ताजी घटना है कि प्रार्थना सभा में उन पर बम फेंकने वाले मदनलाल को भी उन्होंने क्षमा कर दिया, और मेरा दृढ़ विश्वास है कि यदि वे पिस्तौल की गोली से बच जाते तो प्रहारक गोडसे को अवश्य ही क्षमा कर देते। यह दया की वह चरम सीमा है कि जिसको केवल वे ही प्राप्त थे!

राजनीति व दर्शन

हिन्दुस्तान की आजादी की लड़ाई का एक लम्बा इतिहास है। हैदरअली-टीपू-मरहठों का इतिहास, १७५७ प्लासी का युद्ध, १७६४ बक्सर की लड़ाई से लगाकर १८५७ के महान विप्लव तक का काल सैनिक युद्धों का काल था। १८५७ का विप्लव अन्तिम सैनिक प्रयत्न था। इसके बाद का समय काँग्रेस की स्थापना, दादाभाई नारोजी, फिरोजशाह मेहता, गोखले, बाल-पाल-लाल, स्वराजिस्ट पार्टी, Servants of India Society का युग जागृति, शिक्षा व सुधार का युग था। तदनन्तर दूसरा विश्वयुद्ध तक का समय जब गांधीजी अफ्रीका में अधिकारों के लिये संघर्ष कर रहे थे, हिन्दुस्तान में छोटी-मोटी सशस्त्र क्रांतियों के प्रयोग हो रहे थे।

---

१. दक्षिण अफ्रीका में।

१९०५ का बंग-भंग आन्दोलन, लाला हरदयाल–गदर पार्टी, करतारसिंह, खुदीराम बोस व रासूदा[1] का जमाना था वह। १९१९ में साइमन कमीशन आया और उसी समय गांधी जी ने राष्ट्र की सक्रिय राजनीति में प्रवेश किया। उस समय से आज तक का युग लगभग २८ बरस का जमाना "गांधी युग" कहलाता है। गांधी जी के राजनीतिक अखाड़े में आने पर कुछ ऐसी घटनाएं भी हुई जो उनके आदर्श से विमुख थीं– भगतसिंह—आजाद—नवजवान भारत सभा, काकोरी षड्यन्त्र—दिल्ली षड्यन्त्र आदि। किन्तु धीरे-धीरे जनता के दिलों व दिमागों से वे बातें हट गईं और गांधीजी का प्रभाव पूर्ण रूप से जम गया। इसका कारण यह था कि गांधीजी के पास एक नवीन कार्यक्रम था जो कि सार्वजनिक रूप ग्रहण कर सकता था। गांधीयुग की गांधीजी द्वारा संचालित क्रियात्मक तथा अहिंसात्मक असहयोग एवं सत्याग्रह की चार लड़ाइयाँ लड़ी गईं १९२१, १९३०, १९३२, १९४२ में। यही वह प्रोग्राम था, यही वह मन्त्र था, जिसने लोगों को, आम जनता को आकर्षित किया। उन्होंने जनता के हृदय में इस तर्क को बैठा दिया कि साम्राज्यवाद की नींव बल के खम्भों पर नहीं जनता के सहयोग के खम्भों पर टिकी हुई है। सहयोग हटा तो भवन गिर जायगा।

राजनैतिक जीवन में गांधीजी की सफलता संघर्ष के तरीके के सही परिवर्तन में निहित है, और वह तरीका है—"सत्याग्रह"। सत्याग्रह के वे आदि-प्रवर्तक थे। यही वह शस्त्र है जिससे हम आज स्वतन्त्र कहलाने के अधिकारी हुए।

गांधीजी के बागडोर सम्हालने के पूर्व राजनैतिक क्षेत्र में दो विचार-धाराएँ काम कर रही थीं। एक विचार-धारा के लोग

प्रस्तावों द्वारा, डेपुटेशनस द्वारा तथा अन्त में कौंसिल-प्रवेश द्वारा, वैधानिक सुधार करवाना चाहते थे और दूसरी विचार-धारा के लोग प्रचण्ड शक्ति-सम्पन्न बरतानवी साम्राज्यवाद के जुए को छोटे-मोटे आतंकवादी प्रयोगों द्वारा उतार फेंकने में विश्वास रखते थे। गांधीजी ने सबसे पहले अनुभव किया कि जब तक संघर्ष को 'सामूहिक रूप' नहीं दिया जाता यानी इसे जनता का संघर्ष नहीं बनाया जाता तब तक सफलता असम्भव है और इसी सामूहिक संघर्ष के प्रोग्राम को उन्होंने 'सत्याग्रह' के रूप में राष्ट्र के सामने रखा। युद्ध की इस नवीनतम प्रणाली के दो पहलू उन्होंने उपस्थित किये—१. असहयोग और २. निष्क्रिय प्रतिरोध। इन दोनों के मिले-जुले प्रयोग का नाम सत्याग्रह है। वैसे केवल संघर्ष के दृष्टिकोण से इस सत्याग्रह के दो रूप हो सकते हैं—एक सशस्त्र सत्याग्रह और दूसरा निशस्त्र सत्याग्रह अथवा अहिंसात्मक सत्याग्रह। देश, काल और परिस्थिति को दृष्टि-बिन्दु में रखते हुए उस समय सशस्त्र क्रान्ति मौजू नहीं थी। क्योंकि वह संघर्ष का सामूहिक रूप ग्रहण नहीं कर सकती थी। छोटी-मोटी सशस्त्र क्रान्ति अङ्गरेजी साम्राज्य को उलटना तो दूर रहा उस पर कोई असर भी नहीं डाल सकती थी। एक और तरीका लोगों के दिमाग में चक्कर काट रहा था—ब्रिटेन के शत्रु देशों से मिलकर सशस्त्र आक्रमण। किन्तु उस समय ऐसा कोई अवसर भी उपलब्ध नहीं था। अतएव गांधीजी के मस्तिष्क में स्वतन्त्रता की इस लड़ाई को जनता की सामूहिक शक्ति के द्वारा अहिंसात्मक आन्दोलन के रूप में चलाने की योजना आई, और यही वह सूझ थी जिसने गांधीजी को उस समय की राजनीति का अग्रगण्य नेता बना दिया। संघर्ष का यही तरीका राजनीति में गांधीवादी विचारधारा कहलाई। पहले तो गांधीवाद का यह रूप पूर्ण राजनैतिक था—और इस प्रणाली को केवल साम्राज्यवाद के विपरीत नीति के रूप में अपनाया गया था किन्तु बाद में इसमें परिवर्तन होने लगा।

गांधीजी की प्रवृत्ति अध्यात्म और दर्शन की ओर झुकने लगी। फलतः गांधीवादी राजनीति भी उससे प्रभावित हुई और गांधीजी के अध्यात्म और दर्शन के विचार उसमें प्रवेश पा गये। अब गांधीवाद केवल राजनीति ही नहीं रहा था किन्तु राजनीति के साथ-साथ 'जीवन का एक दृष्टि कोण' भी बन गया था। जीवन के इस 'दृष्टि-कोण' में सत्य, अहिंसा, धर्म और अपरिग्रह का अपना विशिष्ट स्थान है। इतना ही नहीं, यह जीवन के गांधीवादी दृष्टिकोण का आदर्श है। इस दृष्टिकोण से समाज-निर्माण का कार्य भी राजनीति के साथ-साथ चल रहा था।

उस समय भी और आज भी समाज-निर्माण में दो विचार-धाराएं कार्य कर रही हैं। एक पक्ष कट्टर दृश्य वस्तु के आधार पर निर्भर रह समाज की व्यवस्था के निर्माण में बहुजन कल्याण समझता है। इतिहास की पृष्ठभूमि की अवहेलना कर नवीन विज्ञान की शक्ति द्वारा अपनी क्रांति चाहता है किन्तु क्या केवल वस्तु-विज्ञान के सैद्धान्तिक आधार पर समाज-व्यवस्था का निर्माण व्यवहारतः सम्भव है?—दूसरा पक्ष रूढ़िग्रस्त द्रष्टा आत्मा के आधार पर समाज-निर्माण में व्यस्त है। वस्तुव्यापार के मौलिक सिद्धान्तों की व्यवस्था में आवश्यकता तथा इहलोक वैज्ञानिक बुद्धि का, उन्नयन एवं निर्माण में योग की अनुभूति से दूर उसका मस्तिष्क केवल हृदय के प्रभाव में परिचालित होता है। आदर्श की दो संकीर्ण खिंची लकीरों के बीच मदारी द्वारा डण्डे के बल पर बँदरिया के नृत्य की तरह नैतिकता और लोकदृष्टि के अंकुश से मानवी आकांक्षा, लालसा और आवश्यकता के सीमाबद्ध नृत्य में बहुजन कल्याण की कल्पना करता है। दूर 'चन्द्रलोक' में स्थित जीवन का अव्यवहारिक आदर्श ही उसका लक्ष्य है। समाज को

बनाने में उसका विश्वास नहीं। किन्तु मानव कल्याणकारी समाज-व्यवस्था के लिये व्यवहारिकतः केवल ऐसा आदर्श संभव है ?

(रेखा गणित की एक सैद्धान्तिक परिभाषा है कि 'रेखा' की केवल लम्बाई होती है—चौड़ाई नहीं। जहां तक सिद्धान्त का प्रश्न है "मान लेना पड़ता है" किन्तु व्यवहार में रेखा अंकन क्या बगैर चौड़ाई सम्भव है ?)—एक ओर सीमोलंघन को प्रोत्साहन है तो दूसरी ओर स्वाभाविक उभार को दबाने का प्रयत्न। संस्कार-परिष्कार के बिना दोनों विचार-धाराएँ एकांगी और अव्यावहारिक हैं क्योंकि एक उच्छृङ्खल अव्यवस्था के कारण का भय उत्पन्न करती है तो दूरी इनक्लाब के आमंत्रण का। क्योंकि वृत्तियों के दबाव की प्रतिक्रिया स्वाभाविक है।

समाज के मर्यादाबद्ध उन्नयन के लिये आवश्यकता है आदर्श और यथार्थ का समन्वय कर संस्कार की। अथवा विलग रूप से एक की अग्नि में दूसरे के परिशोधन की। समाज के सही पथ-प्रदर्शन के लिये आदर्श उतना ही आवश्यक है जितना यथार्थ, और यथार्थ भी उतना ही आवश्यक है जितना कि आदर्श। "Let there be no existence of God but there must be belief in the existence of God."[1]—कारण स्पष्ट है। भ्रष्ट मार्ग के प्रयत्न में मुब्तला समाज को 'ऊपर' का अंकुश सही पगडण्डी पर ले आता है। अतः हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि बहुजन कल्याण के लिये 'अलौकिक को मनोवैज्ञानिक लौकिकता के साँचे में ढाल कर' समाज के 'नव-निर्माण का प्रयास' करना चाहिये या 'वस्तुवैज्ञानिक वास्तविकता को आदर्श की भट्टी में तपाकर' 'नवनिर्माण की ओर जुटना' चाहिये।—गान्धीजी आदर्श को मनोवैज्ञानिक वास्तविकता का पुट चढ़ा, समन्वय का सिद्धान्त प्रतिष्ठापित करते हैं। उनके सिद्धान्तानुसार, समाज के

---

1 French Poet Voltire.

मर्यादाबद्ध उन्नयन के लिये समन्वय का यह रूप आवश्यक है—क्योंकि अलग-अलग स्तरों पर स्थित यथार्थ और आदर्श एक ही मूल वस्तु के दो पक्ष हैं—इनमें वस्तु विभेद नहीं है केवल दृष्टि-विभेद है। वस्तुतः यथार्थ और आदर्श के समन्वय पर समाज के सामुहिक कल्याण का पथ—राष्ट्र की वर्तमान परिस्थिति के दृष्टि-बिन्दु से—उपयोगी है।

वैसे गान्धीवाद विश्व के अन्यान्य 'वादों' से उद्देश्य में भिन्न नहीं है और न हो ही सकता है क्योंकि प्रत्येक वाद का अंतिम उद्देश्य 'न्याय की स्थापना' है। इस न्याय की स्थापना के अभिप्राय एवं उसके तरीकों में असमानता हो सकती है। वैज्ञानिक भौतिकवाद के अनुसार न्याय की स्थापना का अभिप्राय केवल सांसारिक कल्याण है। वे मानव के भौतिक आनन्द या ऐन्द्रिय सुख को सच्चे 'न्याय की स्थापना' समझते हैं। फिर इसे येन केन प्रकारेण, सत्य, अहिंसा, धर्म अथवा असत्य, हिंसा व अधर्म द्वारा ही क्यों न प्राप्त किया हो। गान्धीवाद सत्य, अहिंसा एवं धर्म द्वारा ही प्राप्त किये मानव के सांसारिक एवं आध्यात्मिक दोनों प्रकार के कल्याणों के समन्वय को सच्चे "न्याय की स्थापना" समझता है।

समाजवादी और गान्धीजी

"I too am a Socialist. I desire to end capitalism..."[1]

'मैं भी समाजवादी हूँ' ऐसा गान्धीजी ने अनेक बार कहा है। साधारण शब्दों में समाजवाद सर्वहारा (Proletariat) का प्रजा सत्तात्मक राज्य है। वह एक वर्ग विहीन समाज-व्यवस्था है। यदि यही समाजवाद की कसौटी है तो मानना पड़ेगा कि गान्धीजी प्रथम श्रेणी के समाजवादी थे। जहाँ तक वर्ग विहीन समाज और उसके

विहीन समाज (Classless society) की स्थापना चाहते हैं। अन्तर केवल तरीकों में है। वैज्ञानिक भौतिकवादियों का मत है कि समाज वर्गों में विभक्त हो गया है। इन वर्गों में आपस में संघर्ष चलता रहता है। वर्गों के इस संघर्ष से ही समाज की आगामी नवीन अवस्था का निर्माण होता है। इस सिद्धान्त को मानकर ही वे 'वर्ग कलह' के तरीकों को अपनाते हैं। गान्धीजी दोनों श्रेणियों में समझौते का मार्ग सुझाते हैं और वैज्ञानिक भौतिकवादी वर्ग-कलह को उभाड़ संघर्ष द्वारा एक श्रेणी का आमूल विच्छेद। अन्तर केवल रोग के इलाज में है। रोग का निदान एक ही है। गान्धीवाद फोड़े को दवा लगा बिठा देना चाहता है तो साम्यवाद फोड़े को पका आपरेशन का मार्ग सुझाता है।

श्री हरिलेडलर ने अपने विख्यात ग्रन्थ समाजवादी विचारधारा के इतिहास में लिखा है—"वर्तमान इतिहास के सर्व साधारण विद्यार्थी को भी यह ज्ञात है कि समाजवाद के अनेक रूप हैं।" ऐसी परिस्थिति में गान्धीजी के तत्वज्ञान को कौनसे निष्कर्ष पर उतारा जावे? समाजवाद की कसौटी क्या है? सीधे-सादे शब्दों में आर्थिक, सामाजिक व राजनैतिक समानता के आधार पर स्थापित समाज-व्यवस्था ही समाजवाद है। और गान्धीजी के तत्वज्ञान में ऐसी समाज-व्यवस्था को पूर्ण स्थान ही नहीं है बल्कि वे ऐसी समाज-व्यवस्था की ही कल्पना किये बैठे थे और इस सम्बन्ध में उनके विचार स्पष्ट थे—६ जून १९४२ को लूईफिशर से बातचीत में और भी स्पष्ट होगया—'What is your programme for the improvement of the lot of the Peasantry? गांधीजी ने उत्तर दिया—The peasants would take the land. लूईफिशर ने फिर प्रश्न किया—Would the landlords be compensated? गान्धीजी का उत्तर कितना विवेकपूर्ण था—No, that would be fiscally

impossible.[1]—जमीन उनकी है जो उसे जोतते हैं या इसे दूसरे शब्दों में यों कहा जा सकता है कि "उत्पादन का मालिक उसका उत्पादन कर्ता है। भूमि का तथा उद्योग-धन्धों के राष्ट्रीयकरण का अर्थ भी तो यही है और यही तो समाजवाद चाहता है और आज इसी की वह माँग कर रहा है। अतः हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि जहाँ तक भूमि के तथा उद्योग-धन्धों के राष्ट्रीयकरण का प्रश्न है गान्धीजी समाजवादी विचारधारा से पूर्णतया एकमत थे।

इस प्रकार धन के उत्पादन, विभाजन व विनिमय की समस्या तो हल हो जाती है। समाजवाद के प्राथमिक मौलिक सिद्धान्तों में से दो मसले और रह जाते हैं जिन पर कि हमें विचार करना है। एक है 'वर्ग' का मसला और दूसरा 'राज्य' का। वर्ग के सम्बन्ध में तो हम ऊपर लिख चुके हैं और यह निर्विवाद कहा जा सकता है कि गान्धीजी वर्गभेद के विरुद्ध थे। अस्पृश्यता-निवारण, उनके वर्ग विभेद को मिटाने के प्रयत्नों का एक अंग है।

रहा प्रश्न 'राज्य' का। यह मसला बड़े विवाद का विषय है। जैसा कि मैं ऊपर उल्लेख कर चुका हूँ कि समाजवाद के बहुरूप हैं। उसमें से समाजवाद का एक रूप अथवा एक विचारधारा के के लोग राज्य को सर्वहारा का तानाशाही राज्य (Dictatorship of the proletariat) बनाना चाहते हैं। सोवियत संघ का आधुनिक राज्य ऐसा ही राज्य है। यहाँ सर्वहारा द्वारा नियुक्त डिक्टेटर ही राज्य का संचालन करता है। उसे राज्य के सब प्रकार के अधिकार प्राप्त हैं। इस प्रकार की राज्य-प्रणाली की पृष्ठभूमि में मार्क्स का यह सिद्धान्त काम कर रहा है कि ऐसी राज्यप्रणाली कायम होने पर व्यक्तिगत स्वत्व, सामाज के अधिकारों में परिवर्तित हो जावेंगे और ऐसा पूर्णतया हो जाने पर व्यक्तिगत अधिकारों का प्रश्न ही नहीं रहेगा—

1. A week with Gandhi page 43.

फलतः राज्यदण्ड की आवश्यकता ही महसूस नहीं होगी। इस प्रकार कुछ समयवाद 'शासन-विहीन-समाज' का निर्माण होगा। 'The state whithers away' की यह कल्पना गांधीजी के विचारों से साम्य नहीं रखती। ऐसी राज्य-व्यवस्था में राज्य को सर्वोपरि मानकर चलना पड़ता है। हालांकि वह राज्य राष्ट्र के सर्वहारा के निर्वाचित प्रतिनिधि द्वारा ही संचालित व संपादित होता है। किन्तु ऐसा राज्य व्यक्ति के स्वत्व (Individualism) को निःशेष कर देता है। ऐसी प्रणाली में धनसत्ता के केन्द्रीयकरण के साथ-साथ राज्य-सत्ता का भी केन्द्रीयकरण होता है और ऐसे समाज-निर्माण से लोकसत्ता को आघात पहुँचता है। जन-प्रगति में अड़चन पैदा होती है क्योंकि राज्य घटक के ऊपर हावी होता है न कि घटक राज्य के ऊपर।

इसके विपरीत "Gandhi is an individualist, without force and without money. His individualism is not based on property. It is based on personality."⊛ गाँधीजी व्यक्तिवादी थे और वे राज्य में धनसत्ता तथा राज्यसत्ता दोनों का विकेन्द्रीकरण चाहते थे तथा लोकसत्ता या जनतंत्र के हिमायती थे। यह उनके वक्तव्यों तथा लेखों से अनेक बार स्पष्ट हो गया है। लुई फिशर से बातचीत के दौरान में महात्माजी ने कहा—The provinces must enjoy broad autonomy..........."[1] '...........The centre of power now is in New Delhi...........I would have it distributed among the seven million villages of India.'[2] समाजवादी विचार धारा के लोगों का एक पक्ष भी थोड़े अन्तर के साथ गांधीजी की इस

⊛ Luis Fisher.

1. page 40—A week with Gandhi.

2. „ 64 „ „

विचारधारा से एकमत है। इंगलैंड के नेशनल सोश्यलिस्टस् तथा भारत के समाजवादी भी वर्गहीन समाज का विकेन्द्रीय प्रजा-सत्तात्मक राज्य में विश्वास करते हैं। इस प्रकार भारतीय समाजवादी दृष्टिकोण 'वर्ग' व 'राज्य' के मसले पर गांधीजी से एकमत है।

गाँधीजी के सम्बन्ध में कुछ लोगों की गलत व भ्रान्त धारणाएँ हो गई हैं और कुछ लोग गाँधीजी को जान बूझकर गलत प्रस्तुत करने लगे हैं। उनके नाम का अपने विरुद्ध विचारधारा के लोगों की बढ़ती हुई शक्ति को कुचलने में उपयोग (exploit) करने लगे हैं। गाँधीजी के साथ समाजवाद शब्द का उपयोग करने पर वे लोग आश्चर्य प्रकट करते हैं और गांधीजी को समाजवाद के विरुद्ध तक कह डालते हैं। जहां तक समाजवाद के मूलभूत सिद्धान्तों का प्रश्न है यानी 'किसान-मजदूर-प्रजा के जनसत्तात्मक राज्य' का सवाल है यह निःसंकोच और निर्विवाद कहा जा सकता है कि गाँधीजी इसके पूर्ण हिमायती ही न थे बल्कि ऐसी ही राज्य-व्यवस्था के लिये उन्होंने आजन्म संघर्ष किया। गांधीजी द्वारा संपादित अहमदाबाद के मिल मजदूरों की हड़ताल तथा मद्रास के एक भाषण में उनके यह उद्गार—"मालिकों की अपेक्षा श्रमिक अपने कर्त्तव्य अधिक दक्षता से पालन करते हैं।" श्रमिकों के प्रति उनके हृदय के भावों को स्पष्ट प्रकट करते हैं।

ऊपर के इस विवेचन से गांधीवाद व समाजवाद के अन्दर साम्य तथा विभेद के स्थल स्थूलरूप से स्पष्ट हो जाते हैं। मेरा यह दृढ़ विश्वास है, और जिन्होंने मृत्यु से पूर्व गांधी जी द्वारा लिखे कांग्रेस विधान के आलेख को पढ़ा होगा उनका भी पूर्ण विश्वास होगा कि गांधी जी यद्यपि समाजवादी पारिभाषिक (Jargon) शब्दों में अपने विचार व्यक्त नहीं करते थे तब भी उनका उद्देश्य जनसत्तात्मक समाजवाद की स्थापना ही था। उन्होंने उस मसविदे में स्पष्ट

लिखा है—"Equality of opportutnity and equal status for all; irrespective of race, creed or sex........"* अवसर एवं अधिकारों की समानता समाजवाद के सिद्धान्तों में प्रथम स्थान रखते हैं।

साहित्य और कला

गान्धीजी अपने जीवन के सब क्षेत्रों में अलौकिक युगपुरुष थे। जीवन से सम्बंध रखने वाले प्रत्येक पहलू पर गांधीजी ने विचार किया और न्यूनाधिक प्रभावित भी किया। साथी शांतिप्रिय द्विवेदी ने अपनी पुस्तक 'संचारिणी' में लिखा है कि 'साहित्य का आज का युग गान्धी-टागोर युग है।' गांधीजी ने साहित्य को केवल प्रभावित ही नहीं किया किन्तु साहित्य की सेवा भी बड़े लगन से की है तथा उनका साहित्य में अपना महत्वपूर्ण स्थान भी है। १९३१ में स्व० भूलाभाई देसाई ने गुजराती साहित्य के दसवें अधिवेशन के अध्यक्ष पद से भाषण देते हुए गान्धीजी की साहित्य सेवा के सम्बंध में कहा था—"......महात्मा गान्धी ने जो गुजराती भाषा की सेवा की है उसका मूल्यांकन करने वाले हम कौन हैं? जिसने प्राचीन व अर्वाचीन संस्कृति और पुराने व नये विचारों का सुन्दर समन्वय कर अनन्त सत्य के स्वरूप को प्रकट कर समझाया; इतना ही नहीं, बल्कि सत्य के दीपक के प्रकाश द्वारा गुजरात के नगर-नगर व डगर-डगर में जो प्रकाश फैलाया—उसकी सेवा का माप कैसे हो सकता है.....।" राष्ट्र-भाषा हिन्दी भी बापू के प्रभाव से अछूती नहीं रही। हिन्दी के ऊपर भी बापू के अनेक उपकार हैं। आज अन्तर प्रान्तों में हिन्दी के आदान-प्रदान का श्रेय गांधीजी को ही है। गान्धीजी की हिन्दी सेवा के बारे में बहुत कुछ लिखा जा सकता है, यहाँ उसके विवेचन की आवश्यकता नहीं।

---

* Draft Costitution of Congress para one.

साहित्य के साथ-साथ गांधीजी ने अन्य कलाओं को भी प्रभावित किया। संगीत, चित्र तथा स्थापत्य कला भी उनसे प्रभावित हुई हैं। रविशंकर रावल; आमन्द व कनुगांधी के निर्माण में गांधीवादी विचार धारा का काफी हाथ रहा है।

वैसे साधारण लोगों का यही अनुमान है कि बापू जैसे तपस्वी व्यक्ति, जीवन के इन माधुर्यमय अंगों से दूर ही रहते होंगे किन्तु वास्तव में ऐसा नहीं है। गांधीजी कला के पारखी व कलारसिक थे तथा उनके अपने कला पर मौलिक विचार थे। एक-दो उद्धरणों से बापू की कलाप्रियता तथा उनके कला के सम्बंध में अपने विचार स्पष्ट हो जावेंगे। कला का एक स्थल पर उन्होंने वर्णन किया है:—

"..........रोममां पोपना संग्रह मां में एक मूर्ति जोई। ते जोतांज हुं मूर्छित थई गयो हतो। ए मूर्ति छे 'क्राइस्ट ऑन दी क्रॉस' नी। ए मूर्ति जोई ने माणस दिवानो थई जाय। ए समजाव वां रविशंक रावळ मारी पासे न होता उभा, पण ए जोइने हूँ स्तब्ध थई गयो.........।"

कला की गांधीजी की यह परख स्वयं स्फूर्त थी, सच्ची कला के प्रति उन्होंने कभी अप्रीति नहीं दरसाई बल्कि सदा ही सच्ची कला के प्रति उन्होंने अपनी रसिकता ही व्यक्त की है। नग्न स्त्री की मूर्ति देखकर भी उन्होंने घृणा प्रकट नहीं की। वहाँ भी उन्होंने सच्चे कला रसिक की पारखी वृत्ति का परिचय दिया। उनके स्वयं का लिखा यह वर्णन देखिये :—

'थोडां वर्ष उपर म्हैसुर मां वेलुरमां गयो हतो। त्यानां प्राचीन मंदिरमां नग्नावस्थामां उभेली एक स्त्रीनी प्रतिभा जोई हती—एमने कोइए बतावी न होती. पण म्हारुं ध्यान एसदम त्यां गयुं आने हूँ आकर्षायो। हूँनग्नावस्था मां उभेली स्त्रीनु. अहीं वर्णन नथी करवा

इच्छितो पण ए मूर्तिनों जे भाव हूँ समझ्यो ते जणावु छुं। एका पगनी आगल एक वींछी पड्यो छे। एनो कवि विभत्स न हो तो एटले स्त्री ने कपडां थी कांइक ढ़ाकी छे। ए काली संगमरमर नी मूर्ति छे। एम याये के कोई रंभा पत्नी छे ने अकलाई रहेली छे। हूँ एनु गामठी वर्णन ज करु छुं। हूँ तो जोईज रह्यो ए पोता ना अंग उपरनां कपडां तोडी रही छे। कला ने जीव्हानी जरुर नथी होती। मने थयु के साक्षात कामदेवता अहिं वींछी थइने बैठी छे। पेली बाला ने अंगार व्यापी गये छे। कविए काम ने विजय मेलववा दीधो नथी। ए स्त्रीना अंगोअंग उपर एनी वेदना चितराएली छे। रविशंकर भले एनो गये ते अर्थ करे। पण मरा गामठी अर्थ खरो।" नग्न स्त्री मूर्ति की कला समीक्षा गाँधीजी की कला रसिकता का प्रबल प्रमाण है।

कला रसिकता के साथ-साथ कला के सम्बन्ध में भी गाँधीजी के विचार भी बड़े ही समयोपयुक्त हैं—बङ्गाल के कलाविद दिलीप-कुमार से वार्तालाप के दौरान में कला के सम्बन्ध में बापू ने अपने विचार व्यक्त किये थे :—

"कला सादगी में सौन्दर्य है। और मेरा विश्वास तो यह है कि तपश्चर्या जीवन में सबसे बड़ी कला है—क्योंकि तपश्चर्या कृत्रिमता और अन्धविश्वासों से विहीन जीवन में सरल सौन्दर्य की अभि-व्यक्ति है। मेरी दृष्टि में प्रकृति-सौन्दर्य की भाँति ऊँची कला भी वही है जो सर्व साधारण की समझ में आजावे। प्रकृति की भाषा की तरह कला का रूप और उसकी अभिव्यक्ति दोनों ही सीधे-सादे होने चाहिये।"

कला के सम्बन्ध में बापू के बिचार स्पष्ट हैं और साहित्य भी कला का एक अङ्ग ही है। वे 'कला, कला के लिये' में विश्वास न कर, 'कला, मानव कल्याण के लिये' में विश्वास करते थे। वे कला का ऐसा व्यक्तिकरण चाहते थे जो जन-जन को सहज सुलभ हो। ऐसी

कला में उनका विश्वास नहीं था जिसे समझने में विशेष कर टेकनीक की आवश्यकता प्रतीत हो।

ऐसा सब क्षेत्रों में अलौकिक युगनायक बापू हमारे बीच ऐसे समय नहीं रहा जब कि हमें उसकी सबसे अधिक आवश्यकता थी- इसे दुर्भाग्य के अतिरिक्त और क्या कहा जा सकता है। उसकी स्मृति में हम चार आँसू बहाने के अतिरिक्त और कर ही क्या सकते हैं--

हम उसके पद चिह्नों पर चलने का वरदान चाहते हैं और कामना करते हैं कि हिन्दी जगत की ये कुसुमाञ्जलियाँ उस दिव्यंगत आत्मा को चिर शान्ति प्रदान करें।

२५६

--रामप्रकाश मलहोत्रा

अनुक्रमणिका

क्रमांक नाम कवि पृष्ठ

क्रमाङ्क	नाम कवि	पृष्ठ
४८.	श्री घासीराम जैन 'चन्द्र'	१५६
४९.	श्री शिशुपालसिंह 'शिशु'	१६६
५०.	श्री 'विराज'	१६८
५१.	श्री राजेन्द्र यादव	१७१
५२.	सुश्री सुशीला शर्मा	१७२
५३.	श्री 'भँवरेश'	१७३
५४.	सुश्री इन्दिरा गुप्ता	१७४
५५.	श्री लक्ष्मीशंकर मिश्र 'निशंक'	१७६
५६.	श्री विष्णुदत्त शर्मा 'विकल'	१७९
५७.	सुश्री उर्मिला गुप्ता 'व्यथिता'	१८१
५८.	श्री जगदम्बाप्रसाद सक्सेना 'मयङ्क'	१८३
५९.	श्री नवाब साहब रामपुर	१८६
६०.	श्री लखनप्रतापसिंह 'उरगेश'	१८८
६१.	श्री कृष्णकुमार द्विवेदी	१८९
६२.	श्री द्वारकाप्रसाद 'विजय'	१९०
६३.	श्री प्रकाश 'बनवासी'	१९१
६४.	श्री गणेशदत्त 'इन्द्र'	१९३
६५.	कुमारी 'मृणाल' मलहोत्रा	१९५
६६.	श्री राजबहादुर आर्य 'पद्म'	१९६
६७.	सुश्री कमल व्यास	१९८
६८.	श्री हरिकृष्ण भार्गव	१९९
६९.	श्री अमर वर्मा	२००
७०.	श्री गौरीशंकर श्रीवास्तव	२०१
७१.	श्री राजेन्द्र सक्सेना	२०२
७२.	श्री रामजीशरण सक्सेना	२०५
७३.	श्री 'उपमन्यु'	२०७

पूर्वार्द्ध:—

—श्री मैथिलीशरण गुप्त

सन्त महात्मा हो तुम जग के
बापू हो हम दीनों के,
दलितों के अभीष्ट वरदाता
आश्रय हो गति हीनों के।
आर्य अजात शत्रुता के उस
परम्परा के स्वतः प्रमाण,
सदय बन्धु तुम विरोधियों के
निर्दय सुजन अधीनों के,

सम्वत १९९२ वि०

व्यक्त तुम्हारा बाह्य हमारे
वर्तमान का अन्तर्भाग,
किन्तु तुम्हारे अन्तरंग में
उठा अतीत हमारा जाग।
बापू व्यग्र भविष्य हमारा
मिले तुम्हारा सुमन पराग।
भारत-माता के मन्दिर में
संग्रह रहे तुम्हारा त्याग।

सम्वत १९९३ वि०

—स्व० सुभद्राकुमारी चौहान

जब जब भारत पर भीर पड़ी, असुरों का अत्याचार बढ़ा,
मानवता का अपमान हुआ, दानवता का परिवार बढ़ा।
तब तब करुणा से प्लावित हो, करुणा-कर ने अवतार लिया,
बनकर असहायों के सहाय, दानव-दल का संहार किया।

दुख के बादल हट गये, ज्ञान
का चारों ओर प्रकाश दिखा,
कवि के उर में कविता जागी
ऋषि-मुनियों ने इतिहास लिखा।

जन-जन में जागा भक्ति-भाव, दिशि-दिशि में गूँजा यशोगान,
मन-मन में पावन-प्रीति जगी, घर-घर में छाया सुख महान्;
सतयुग बीता, त्रेता बीता, यश-सुरभि राम की फैलाता,
द्वापर भी आया, गया—कृष्ण की नीति कुशलता दर्शाता।

कलियुग आया, जाते-जाते—
उसके गान्धी का युग आया,
गान्धी की महिमा फैल गई
जग ने गान्धी का गुणगाया।

कवि गद्‌गद् हो अपनी अपनी
श्रद्धाञ्जलियाँ भर-भर लाये,
'रोमारोलाँ' 'कवि ठाकुर' ने
उल्लसित गीत यश के गाये।

इस समारोह में रजकण सी, मैं क्या गाऊँ कैसे गाऊँ?
इतनी विभूतियों के सम्मुख, सकुचाती हूँ कैसे आऊँ?
लेखनी काँपती है, फिर भी मन में उठता है यह विचार;
अवतार एक ही होता है, यश-गायक होते हैं हजार।

सब अपनी ही अपनी विधि से
उस प्रभु को भेंट चढ़ाते हैं,
कुछ थाल चढ़ाते हैं मणिमय
कुछ पत्र पुष्प ले आते हैं।

मैं भी अपने दुर्बल कर से, पूजा का साज सजाऊँगी,
टूटे फूटे अटपटे बोल, से भक्ति-भाव दरसाऊँगी;
सोने चाँदी के युग देखूँ, है भाग्य नहीं ऐसा पाया,
जिस लोहे के युग की चर्चा, थी सुनी, वही युग है आया।

दुनिया की सब आवाजों से
जो ऊपर उठ-उठ जाती है,
लोहे से लोहा बजने की
आवाज सब तरफ आती है।

विज्ञान ज्ञान की परिधि आज जब नहीं किसी बन्धन में है,
सब ओर एक ही बात, एक ही चर्चा यह जन-जन में है;
कैसे लोहे में धार करें ? कैसे लोहे की मार करें ?
मानव दानव बन किस प्रकार आपस में घोर प्रहार करें ?

चल जायँ तोप जल जाय विश्व
बम लेकर निकलें वायुयान,
लोहे के गोले बरस पड़ें
वर्षा की बूँदों के समान।

हो ऐसे आविष्कार कि हो, क्षण भर में नाश जगत भर का,
हो खेद न बूढ़े बच्चों का हो भेद न नारी या नर का;
उस ओर साधना है ऐसी, इस ओर अशिक्षित औ' अजान,
फावड़ा कुदाली वाले ये मजदूर और भोले किसान।

आशा करते हैं एक रोज
वह अवतारी फिर आयेगा,
आसुरी कृत्य करके समाप्त
फिर दुनियां नई बसायेगा।

पर किसे ज्ञात था जग में वह अवतरित हो चुका है ज्ञानी,
जिसके तप-बल से झुके सभी दुनियां के ज्ञानी विज्ञानी;
यह कौन एक मुट्ठी भर का अध नंगा सा बूढ़ा फकीर,
जिसके माथे पर सत्व तेज जिसकी आँखों में विश्व-पीर।

जिसकी वाणी की शक्ति भेद -
कर कुलिश कपाटों को जाती,
जिसकी छाती का प्रेम देख
असिधारा कुण्ठित हो जाती

वह गाँधी है वह बापू है वह अखिल विश्व का प्यारा है,
वह उनमें से है एक जिन्होंने आकर विश्व उबारा है;
है बुद्ध सुखी उसमें अपने ही परम धर्म का ज्ञान देख,
है ईसा खुश बलिदान देख, पैगम्बर खुश ईमान देख।

बह चलीं तोप गल चले टैङ्क
बन्दूकें पिघलीं जातीं हैं,
सुन पावन मंत्र अहिंसा का
अपने में आप समातीं हैं।

वे हृदय कठिन अति पत्थर से लो पिघल पिघल कर मोम हुये,
मैं 'राम' बनूँ इस आशय से 'रावण' के घर में होम हुये;
है यही आदि गाँधी-युग का जो बापू ने विस्तारा है,
है यहीं अन्त लोहे का युग, जिसका विज्ञान सहारा है।

विज्ञानी की है परम सिद्धि
जग को लोहे से भर देना,
है हँसी खेल तुमको बापू!
लोहे को पानी कर देना।

इस तुक बन्दी में सार नहीं पर पूजा की दो बूँदें लो,
इन बूँदों में छोटा सा कण उन पावन बूँदों का भर दो;
जो आगाखाँ के महलों में झर-झर भर आईं छलक पड़ीं,
'बा' की संस्मृति में विगलित हो आँखों में बरबस ढलक पड़ीं।

—डा० रामकुमार वर्मा

मौन भी तो मधुर क्षण है।
मृदु सुरभि सी बात पर वह,
फूल का नव आवरण है।
मौन भी तो मधुर क्षण है।

सांध्य बादल जब बदलता
जा रहा प्रत्येक पल में,
छा रही है भ्रांति सी जब
तम सारे गगन-तल में,

क्या न आशाप्रद गगन में
तारिका का ज्योति कण है?
मौन भी तो मधुर क्षण है।

विषम झोंकों से प्रताड़ित
क्षुद्र कण भी हीन तन का,
मार्ग-दर्शन कर सकेगा
वह किसी बलहीन जनका,

यदि किसी प्रणवीर का उस
पर हुआ चिह्नित चरण है।
मौन भी तो मधुर क्षण है।

जब कि जीवन में विकलता
या विषमता आ गई है
और जब प्रतिशोध की
नव-क्रान्ति उस पर छा गई है

क्या न जीवन की अमरता
में विजय का वह मरण है ?
मौन भी तो मधुर क्षण है।

बापू के अन्तिम मौन पर लिखी गई कविता।

—श्री सियाराम शरण गुप्त

बापू का अनशन समाप्त सकुशल हो सत्वर !
प्रभु हे ! तुमसें करें प्रार्थना क्या मुँह लेकर ?
हमने उनके वचन ध्यान से सुने न समझे
वे सुपूर्व में तो सुदूर दक्षिण में हम थे।

कहा उन्होंने—तुम मनुष्य, जी करो न ओछा ;
हम हिन्दू, हम मुसलमान, हमने यह सोचा।
बैरी बनकर एक दूसरे पर हम टूटे ;
कृत्य हमारे क्रूर कुटिल हिंसा में फूटे।

निज में पाशव जन्तु जगाकर भीतर बाहर
प्रभु हे ! तुमसे करें प्रार्थना क्या मुँह लेकर ?

तदपि हृदय के तार दूर होकर भी विचलित ;
अनाघात के किसी शुद्ध स्वर में हैं कम्पित।
आहत भी थे प्राण मानते नहीं पराभव,
सुना रही सन्देश सुभाशा फिर से नव-नव।

नर को हम अवलोक चुके हैं पशु में नर्तित
तो पशु भी क्यों न हो स्वयं नर में आवर्तित ?
यही प्रश्न हो उठे प्रार्थना, प्रभो ! हमारी,
एक भूमि के पुत्र बनें हम नरता धारी।

अनाहार से भला युग-पुरुष को क्या डर है ?
उसे दे सकें प्रेम सुधा वह अजर अमर है।

बापू द्वारा उनके अन्तिम उपवास पर पढ़ी गई कविता।

—श्री बालकृष्ण शर्मा 'नवीन'

१
ज सुनी फिर से जग जनने
क़ट गड़गड़ाहट अम्बर में,
ह वज्र की गगन भेदिनी
नि गूँजी नभ के अन्तर में।

२
दिक्-गज डोले, काल कँप उठा
जबकि दधीचि अस्थियाँ कड़कीं,
वृत्य अंध की असुरपुरी में
छल भस्मक ज्वालाएँ भड़कीं।

३
इक तापस की डेढ़ पसलियाँ
कुलिश-गर्जना कर उट्ठी हैं,
विगत प्राक्-इतिहास कथाएँ
स्मृति पर आज उभर उट्ठी हैं।

४
स्मृत युग में थे दधीचि वे
नने अपना देह-दान कर,
ण किया था वृत्रासुर का
धकार घनघोर प्राणहर।

५
एक दधीचि आज आया यह
जिसकी यज्ञ हुताशन ज्वाला,
प्राण अरणि के संघर्षण से
धधकी देह बीच विकराला।

६
अस्थि-पुञ्ज यह यज्ञ-वेदि सम
ज्वलित हो उठा आत्म ज्वाल से,
चिन्तन मग्न आज यह नरवर
घिरा हुआ है ज्वाल-माल से।

७

यह प्रचण्ड होलिका जल रही
उसके तपो-ज्वलित अन्तर में,
फैला है आलोक शोक-हर
दृग-दृग में अवनी अम्बर में।

८

निज तप के उत्तुङ्ग शिखर चढ़
सुलगा कर प्राणों की होली,
अलख जगा कर कहता है यह
चेत अरी मानवता भोली!

९

इसका तप सन्देश दिवाकर
चमक रहा है गगनाङ्गन में,
अरे रहेगा अब भी क्या तम?
मानवता के मन-प्राङ्गण में।

१०

कई युगों से ठना हुआ है
जड़ औ' चेतन में भीषण रण,
कई युगों से जूझ रहे हैं
चिर प्रकाश औ' निविड़ तिमिरघन।

११

कई युगों से अहो! हो रहा
इन्द्र-वृत्र का यह संघर्षण,
युग-युग से होता आया है
दधीचियों का प्राणाकर्षण।

१२

अगम काल-नद में होता ही
रहता है प्राणों का तर्पण,
अरे 'स्वधा' 'स्वाहा' से ही है
प्राण-विवर्द्धन है प्राणार्पण।

१३

तम-प्रकाश के तुमुल युद्ध में
क्या तम की ही तूती बोली ?
क्या न हुई है पग-पग पर ही
अन्धकार की हँसी ठठोली ?

१४

घन तम ने तो अरे सदा ही
अपनी कलुष-कालिमा घोली,
पर प्रकाश तो छिटकाता ही
रहा सदा निज कुम-कुम रोली।

१५

फिर से आज धरा डोली है
फिर से आज जली है होली।
फिर से आज एक तापस ने
निज प्राणों की झोली, खोली।

१६

इन चालीस करोड़ जनों की
आशाओं का पुञ्ज सनातन,
इन चालीस करोड़ जनों के
गौरव का प्रतीक सुपुरातन।

१७

इन चालीस कोटि मूकों की
घन-गर्जन गंभीर गिरा वह,
तिमिर-ग्रस्त चालीस कोटि की
तेज-पुञ्ज चिर-ज्योति-शिखा वह।

१८

मुट्ठी भर हाड़ों की ठठरी
वह गाँधी जगमोहन जय-जय !
प्राणों को रख चुका दाव पर
होकर अति निःशंसय निर्भय।

१९

जिनने प्राणों के बदले में
सीखा है प्राणों का लेना,
जिनने सीखा है निष्कारण
यों ही पर को पीड़ा देना।

२०

क्यों न हँसें, वे देख देख यह
तिल-तिल प्राण हवन की क्रीड़ा,
क्यों न हँसें वे, देख सन्त को
जग के कारण सहते पीड़ा।

२१

इसी तरह तो कभी हँसे थे
वे—वे येरूशलम निवासी,
उनके पहले विहँस चुके थे
यूनानी सुख-भोग-विलासी।

२२

है अति गहन तमिस्रा जग में
हाँ, छाया है आज अँधेरा;
पड़ा हुआ है आज विश्व में
भीषण अन्धकार का डेरा

२३

आज चुनौती हमें दे रहा
यह दुर्दम तम-तोम भयानक,
कहता है लो नष्ट हुए हैं
सभी ज्योति के स्वप्न अचानक

२४

किन्तु महामानव कहता है
'मम हिय में है प्रखर प्रभाकर
मत घबड़ाओ मानव! जग में
मुस्काएगी उषा अमाहर'

२५

जग को ज्योति-दान देने हित
अपने कोमल अन्तर-तर में-
ओ अति मानव! किया निमंत्रित
तूने रवि निज हिय-अम्बर में।

२६

सूर्य चक्र का भेद न कर तू
मत कर यों ब्रह्माण्ड विद्ध तू!
ऐसी विकट साधना मत कर
ओ निर्मोही! महासिद्ध तू!

२७

यह तव तप-उज्ज्वल अन्तस्तल
यह तव दुर्बल देह पुरातन,
अरे धधक उट्ठेगी रुक जा!
ओ बलिदानी! ओ करुणा-घन!

२८

कर न सकेगी सहन अरे यह
अति तप तेज पुरानी काया,
और हमारा तो सम्बल है
यही, जिसे समझा तू माया।

२९

तुझ देही को इसी देह मिस
अब तक हम सब ने पहचाना,
तेरे इस शरीर को ही तो
हमने अपनी निधि है माना।

३०

बस जर्जर पंजर ही तो है
हम दीनों का एक सहारा
यह न रहा तो हो जाएगा
बस अनाथ यह देश हमारा।

३१

ढौंक रही है यह पामरता
पशुता भी गर्जन करती है,
भावी की काली अँधियाली
हिय में चिन्ता भय भरती है।

३२

अरे ज्योति तो है तेरे ही
इन सकरुण स्नेहिल नयनों में,
ये यदि मिचें, अँधेरा होगा
तेरे जनगण के अयनों में।

३३

खोले रह रे! तू खोले रह
मत मिचने दे अपने लोचन,
इन्हीं टिमटिमाते दियलों से
होगा जग का सङ्कट मोचन।

३४

जब युग उद्ग्रीवी होता है
जब सदियां करवट लेतीं हैं,
मानवता की पुण्य सुकृतियाँ
जब वरदान अमिट देतीं हैं;

३५

अरे तभी तो जग मरुथल में
तुझसा कमल विहँस खिलता है:
बड़े भाग्य से जन समूह को
ऐसा पथ-दर्शक मिलता है।

३६

ना जाने कितने चिर संचित
पुण्यों का प्रतिफल तू आया,
यह न भूलना कि है हमारे
लिये अमृत तेरी यह काया।

३७

हम तेरी वेदना व्यथा को
क्या जानें कैसे पहिचानें ?
तेरी अतला गहराई की
कैसे जाएँ थाह लगाने ?

३८

तुझ सा तो तू ही है नर वर !
तव समान धर्मा न यहाँ है,
ओ सदियों में आने वाले
तेरी उपमा सुलभ कहाँ है ?

३९

तू अपना उपमान स्वयं है
अनुपमेय तू अरे निराले,
तुझको तू ही जान सका है
ओ आजान बाहुओं वाले !

४०

आज बनाएँ क्या हम तेरे
अगणित वरदानों की सूची,
तव तप-बल से ही इस भू पर
उठी बहुत मानवता ऊँची।

४१

रेंग रहे थे जो कि पेट के
बल, इस भूमि खण्ड के जग-जन,
वे ही अब तो उन्नत शिर हैं
सबल हुए उनसे दुर्बल-मन।

४२

तव प्रसाद से प्राप्त हुआ है
सदियों का खोया अपना पन,
अरे आज हुङ्कार उठे हैं
ये नंगे भूखे जर्जर तन।

४३

को मत होम, दयाकर
ऽ! मत मर! अरे अमानी!
कर सकेंगे न कभी हम
गाण दान, रे दानी!

४४

अल्प प्राण हम, महाप्राण तू
स्वल्प निष्ठ हम, तू दृढ़ चेता,
मरण वरण मत कर रे नरवर
मत बन मत बन तू नचिकेता।

४५

तुझसे हमें बहुत पाना है
अरे अभी तो केवल 'अथ' है,
'इति' मत कर ले देख हमारा
कितना विस्तृत बन्धुर पथ है।

४६

हाँ अब आने को है
ग तो अरे प्रवर्तक,
अग्रसूचना लेकर
है रे सत्य समर्थक!

४७

उस युग के निर्माण काल का
तू ही तो होगा अधिनायक,
उस प्रभात की मधुर भैरवी
का तू ही तो होगा गायक

४८

इसीलिये तू टेर हमारी
सुन ले ओ योगी ध्यानास्थित!
तुझको तो अपने जन गण को
करना ही है बहुत व्यवस्थित।

४९
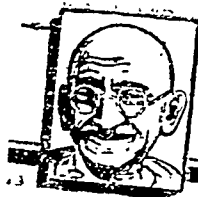
यदि उस पार बुलावे कोई
तो तू मत सुन, मत जा प्यारे!
तेरे बिना सोचले क्या-क्या
हो जाएँगे हाल हमारे

५०

घटाकाश वाणी मत सुन तू
तू मत सुन बलिदान निमंत्रण,
प्राण हवन की विकट क्रिया का
अब तो करले रञ्च नियंत्रण।

५१

देह नहीं हैं तेरा बंधन
प्राण नहीं हैं तेरे बंधन,
जन्म-बंध से विनिर्मुक्त तू
ओ जग के तम-तोम-निकंदन।

५२

मत जा गोकुल छोड़, न जा तू
यमुना पार अरे ओ! मोहन!
तुम बिन कौन सुरास रचेगा?
कौन करेगा फिर गो-दोहन?

५३

मुरली कौन बजाएगा फिर?
ग्वाल-बाल कैसे नाचेंगे?
नटनागर तेरे बिन हम सब
नट-कछनी कैसे काछेंगे?

५४

तू जीवन कालिन्दी मत तर
रुक जा रञ्च हमारी सुनले,
कुछ दिन और इसी गोकुल की
गलियों की कङ्कड़ियाँ चुन ले।

[जि]ला जेल उन्नाव, गान्धी-आत्म-यज्ञ काल—अर्ध रात्रि २ मार्च १९४४।

—श्री हरिशङ्कर शर्मा 'कविरत्न'

विश्व की व्यापक विमल विभूति
आत्म संयमता की अनुभूति
भव्य भावों की पुण्य-प्रसूति
सरलता शुचिता के आगार, तुम्हारा जग में जय जयकार।

देव तुम अस्थि चर्म अवशिष्ट
आत्म-बल मूर्त्त, वरिष्ठ, विशिष्ट
अहिंसा—सत्य—प्रेम परिशिष्ट
महा मानवता के अवतार, तुम्हारा जग में जय जयकार॥

राम का धैर्य, बुद्ध की शान्ति
कृष्ण के कर्म योग की कान्ति
भीष्म की अविचलता-अक्लान्ति
धन्य गुण-गरिमा के आगार, तुम्हारा जग में जय-जयकार।

अडिग अंगद, निर्भय हनुमान
शूर शिवराज प्रताप समान
त्याग-तप-मूर्त्ति, विनय-वरदान
प्रवंचकता के प्रबल प्रहार, तुम्हारा जग में जय-जयकार
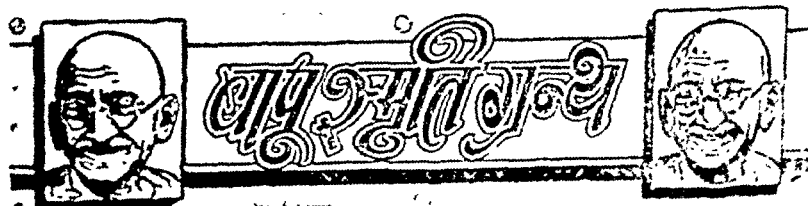
हिमालय से उत्तुङ्ग महान
धीर गम्भीर समुद्र समान
वायु सम व्यापक वितन-वितान
कर्म के सार, धर्म-ध्रुवसार, तुम्हारा जग में जय-जयकार।

उषा प्राची के पुण्यश्लोक
निखिल निस्तार अखिल आलोक
सदा सद्भाव अहर्ष अशोक
समुज्ज्वल ज्योति, जाति-उद्धार, तुम्हारा जग में जय-जयकार।

प्राण-दीनों के रक्त प्रवाह
शिथिलता के असीम उत्साह
व्यथित हृदयों के अन्तर-दाह
दलित दुखियों की करुण-पुकार, तुम्हारा जग में जय-जयकार।

राष्ट्र-मन्दिर के देव उदार
कान्ति के केन्द्र, शान्ति साकार
प्रेम के पुञ्ज दया-आगार
हिन्द माता के हिय के हार, तुम्हारा जग में जय-जयकार।

किसानों मजदूरों के प्राण
निर्धनों निबलों के प्रिय प्राण
पीड़ितों पतितों के निर्वाण
भारती-वीणा की झंकार, तुम्हारा जग में जय-जयकार।

जान्हवी जल से पुण्य पवित्र
हेम हिम से वर विमल चरित्र
शत्रुओं के शुभचिन्तक मित्र
विश्व कृतकृत्य निहार निहार, तुम्हारा जग में जय-जयकार।

सुयश से सुरभित धरणी धाम
योग-यति, साधु-सुधी निष्काम
धन्य सोहन मोहन अभिराम
विश्व के प्यार मुक्ति के द्वार, तुम्हारा जग में जय-जयकार।

देश की आशाओं के पुञ्ज
नीति-रमणी के रम्य निकुंज
भक्ति के भवन, सत्य के कुंज
अहिंसा-सिन्धु अथाह अपार, तुम्हारा जग में जय-जयकार।

तप्त कंचन से तपकर शुद्ध
अभय, अविचल, अजेय अनिरुद्ध
सन्त, संयत, उदार उद्बुद्ध
तपस्या के अनुपम उपहार, तुम्हारा जग में जय-जयकार।

शुद्ध खादी के वरद-विधान
चाक चरखे की तन्मय तान
धन्य स्वातंत्र्य-यज्ञ यजमान
राष्ट्र की नौका के पतवार, तुम्हारा जग में जय-जयकार।
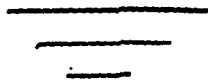
—श्री रांगेय राघव

हाथ बद्ध, देह रुद्ध
किन्तु हृदय सदा मुक्त
सुनता है आर्त्तनाद
मानव का दुख अपार
सिंह करो रौद्र नाद
वन्दी ! कर वज्रनाद !

'तेरा' सुकुमार हृदय
एक फूल सा विमुग्ध
'तेरा' अभिमान दीप
अन्ध तिमिर किये विद्ध
तुझ में विद्रोह शक्ति
कारा को रही भेद
पत्थर के दुर्ग काँप—उठते हैं तुझे देख
वन्दी ! कर वज्रनाद !

उन्नत है भव्य-भाल
दलितों की सुदृढ़ आस

अंग अंग जीर्ण शीर्ण
नव जग का तू विकास
चलता ज्यों वज्र दीप्ति
रुकता ज्यों घन-समुद्र
शासन का दीर्घ चक्र
झुकता हो दीन क्षुद्र
नैतिक तेरा प्रकाश
चेतन का चिर विलास
मानव का नया पंथ, तेरे पथ का प्रसार

वन्दी ! कर वज्रनाद !

देश, जाति, काल-सीम
सब पर तू विजय स्फीत
सत्य का अमोल गीत
मुक्ति का विचार भीम
तुझको शत-शत प्रणाम, वन्दी ! ले शक्ति थाम
जीवन के वज्रनाद !
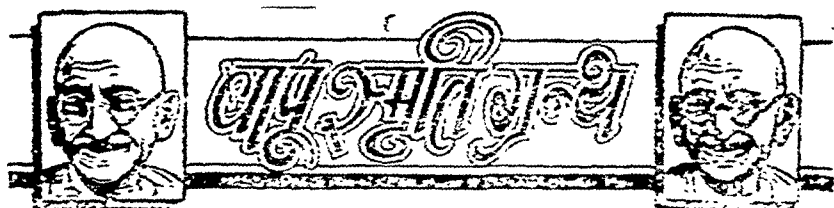
—श्री 'अञ्चल'

देव ! प्रतिज्ञा देख तुम्हारी त्रिभुवन सिहर उठा है

यह कैसा विश्वास जिसे लखकर आकाश लजाया ?
यह कैसा संकल्प जिसे लखकर नगपति थर्राया ?
कैसा स्वप्न तुम्हारा जिसको लखकर जाग्रति हारी ?
यह ज्वलन्त उल्लास जिसे लखकर यौवन सकुचाया ?
पीड़ा-सागर मन में कैसा भीषण ज्वार उठा है ?

मानवता खोकर जड़ मानव निज अभिशाप बना है,
फूटे घातक पाप-हृदय हिंसा का ताप बना है,
रक्त पी रहा है वन-पशु सा फिर भाई—भाई का,
घर-घर में पशुता का खूनी हिंस-वितान तना है,
भ्रान्त मनुज का सहृदयता से चिर विश्वास उठा है।

आजादी मरुभूमि हो रही है—जल रहा वतन है,
कागज के फूलों से सजता उजड़ा हुआ चमन है,
सिर न कटे इसलिये देश को तुमने कटते देखा,
अन्त नहीं पर प्रतिहिंसा का—कैसा विकृत पतन है,
कैसी भीषण आग, धरा का कण-कण खौल उठा है।

स्नेह पंथ से आज न मानव उतर भूमि पर आता,
जीवन-दाता-घन अम्बर से अंगारे बरसाता,
मानवता की तृषित चातकी एक बूँद को रोती,
कौन गगन की नव स्वाती का नीरद बन कर छाता?
एक जलद-भू का मन नव आशा का डोल उठा है।

यह कैसा आदर्श प्राण की भेंट जिसे है प्यारी,
खुली चुनौती बर्बरता को है यह लगन तुम्हारी,
हिन्द महासागर के मुख पर रहे लाज की लाली,
आजादी का ताज न बन जाये तलवार दुधारी।
देव! प्रतिज्ञा देख तुम्हारी त्रिभुवन सिहर उठा है।
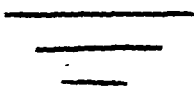
—सुश्री सुमित्रा कुमारी सिनहा

पृष्ठ में इतिहास के नव जोड़कर अध्याय सुन्दर,
सत्य, मैत्री, औ' अहिंसा का पढ़ाया पाठ हितकर,
नाश-निशि पर हे तपस्वी! सृजन के उज्ज्वल प्रहर हो।
युग-पुरुष बापू अमर हो।

सूर्य सम चर्खा लिये तुम कर रहे आलोक प्रसरित,
मनुजता पर विश्व-पशुता को किया तुमने पराजित,
शून्य मरुथल में प्रवाहित अमृत जीवन की लहर हो,
युग-पुरुष बापू अमर हो।

नग्न रहकर नग्नता के पाश को तुम तोड़ते हो,
कोटि जन के, एक इंगित पर दिशा-पथ मोड़ते हो,
आज हिंसा के प्रलय में शान्ति के तुम मुखर स्वर हो।
युग-पुरुष बापू अमर हो।

मिट रही है प्राण रेखा देश की, तुम आज बोलो!
देख कर भावी मनुज की मनश्लोचन आज खोलो!
तिमिर का यह गर्त अब तो ज्योति से परिपूर्ण घर हो।
युग-पुरुष बापू अमर हो।

—श्री नरेन्द्र शर्मा

चलने वाले पीछे छूटे
गहराया पथ में तम अथाह
पर मुड़ कर मत देखो पीछे
हे महाजाति के सार्थवाह!

हम कोटि-कोटि सामान्य कोटि, क्षण भर क्षण भर के लिये व्यग्र,
तुम व्यापक, वेधक दृष्टि युक्त, दिशि काल देखते हो समग्र;
हम एक बूँद के हेतु तृषित, तुम सतत त्रि-पथगा के प्रवाह।
हे महाजाति के सार्थवाह!

हम स्वार्थ बद्ध संकुचित बुद्धि, तुम महामना मानव-महिमा,
हम रेंग रहे पृथ्वी तल पर, तुम व्योम बीच भू की गरिमा;
तुम ज्योति शिखा जग-जीवन की, हम मानवता के हृदय-दाह।
हे महाजाति के सार्थवाह!

हम सब बस अपने हित जीवित, जीवन क्रम केवल क्रय-विक्रय,
उल्लास मूल आनन्द-पद्म, को निगल रहा कर्दम निर्दय,
ध्रुव-दीप बनो मानवता के, खाये जाती भय भरी राह।
हे महाजाति के सार्थवाह!

है एक ओर अन्याय असद, दूसरी ओर पीड़ा निस्स्व,
जो संस्कृत वह अस्वस्थ विकृत, जो प्राकृत वह सुख श्री अपहृत;
तुम प्रकृत चिकित्सक जीवन के, कब से पुकारता भव कराह।
हे महाजाति के सार्थवाह।

हम भूल रहे हैं पग-पग पर, दोहराओ तुम सहयोग प्रेम,
लिखते जाओ पद चिन्हों से, कर्त्तव्य, त्याग, बलिदान-नेम;
बटमार बने बाल्मीकि आज, तुम राम नाम के बनो साह।
हे महाजाति के सार्थवाह!
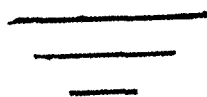
—श्री श्रीहरि

हम दुखियों के हेतु विश्व में, बापू तू वरदान बन गया।

अन्नपूर्णा भारत माँ को
अन्न बिना जब रोते देखा!
फटे चीथड़ों में तन ढाँके
आकुल विह्वल होते देखा,
हृदय कराह उठा, तड़पा तू
फूट पड़े नयनों के निर्भर,
लिये बग़ावत का झण्डा तू
दौड़ पड़ा विप्लव के पथ पर,

भारत की जर्जर काया में, तू विद्रोही प्राण बन गया।
हम दुखियों के हेतु विश्व में, बापू तू वरदान बन गया॥

चक्र सुदर्शन बन कर चर्खा
जब दीनों का त्राण बन गया,
सत्य-अहिंसा का सत्याग्रह
नूतन युग का गान बन गया,

जब तू अपनी धुन में आकर
जेलों का महमान बन गया,
मुट्ठी भर हड्डी का ढाँचा
एक बड़ा तूफान बन गया,

झुका विश्व चरणों पर जब तू भारत का भगवान बन गया।
हम दुखियों के हेतु विश्व में, बापू तू वरदान बन गया॥

कोटि-कोटि साँसों को अपनी
साँसों में जब बाँध चुका तू,
कोटि कोटि प्राणों को अपने
प्राणों से जब साध चुका तू,
विश्व हो गया था डग-मग जब
बापू ! तू भूचाल बन गया,
गुरु, गिरि-गौरव, उच्च हिमालय
तेरा ऊँचा भाल बन गया,

सागर ने पग छुये, स्वयं ही जब तू हिन्दुस्तान बन गया।
हम दुखियों के हेतु विश्व में, बापू ! तू वरदान बन गया॥

—श्री रमई काका

बापू के चरनन मां प्रनाम, चरनन की पयधरि का प्रनाम।
पयधरि की माटी का प्रनाम, माटी के कन कन का प्रनाम।

उइ चरन कि जिनके धरतै खन, धरती का कन-कन जागि जात,
परबस पिरथी पर आजादी कै मनहुँ मोहर है लागि जात,
जिनके दरसन हित सिगरे जन हिरदय की आँखी खोलि देयँ,
जिनके देखत खन दसौ दिसा तक भारत की जय बोलि देयँ,
उइ चरन कि जिनकी लीकन ते दासता पिसाचिन कटी जाति,
है दबी जाति सब कूट नीति पग-पग अँधियारी मिटी जाति।
सागर परबत यक मिल होइगा जिनकी लीकन ते जुरिजुरि कै।
घर-घर सुराज सन्देस हिसि पयधरि की धूरी उड़ि उड़ि कै,
बरदानी पयधरि का प्रनाम, पयधरि की धूरी का प्रनाम।
धूरी के कन-कन का प्रनाम, बापू के चरनन मां प्रनाम॥

चरनन की कोमल चापनते है डगमग डगालत राजासन,
औ' अपने आपै खुले जात हैं नाग फाँस के सब बन्धन,
दुनिया के कष्ट निवारे का, सुख सम्पति सब ठुकराइन जी,
उइ कोटि चरन के अगुवा हैं, काँटन मां लीक बनाइन जी,

उइ जुगल चरन जी खैंचि दिहिन, दुइ लीकै सत्य अहिंसा की,
उनहिन पर फहरत देखि तिरंगा पेंढुरी काँपी हिंसा की,
उइ जुगल चरन जी धरम करम कै सच्ची राह सुझाय दिहिनि,
भगवान भगति औ' देश भगति का एकुइ पन्थु बनाय दिहिनि,
हितकारी सत्पथ का प्रनाम, सब-पथ की माटी का प्रनाम।
माटी के कन-कन का प्रनाम, बापू के चरनन मां प्रनाम॥

प्रिय बापू के उइ चरन कि जिनका रिनिया भारत का कनकन,
सब ठाँव लच्छिमी स्वागत मां, श्रद्धा ते जिन पर है अर्पन,
उइ चरन कि जिनका झुके महल, झोंपड़ियाँ जिन पर बलिहारी,
तिन हिन की पावन लीकन मां है छिपी द्रौपदी की सारी,
उइ चरन कि जी लीन्हेनि उबारि केवट अस कोटि अछूतन का,
जिन पर है आस अहिल्या कै, होई उद्धार कबै तन का,
उइ चरन कि जिनकी धूरि परत काराघर तीरथ धाम बना,
उइ चरन कि जिनके बास किये तप-भुइयाँ सेवा ग्राम बना,
पावन तप भुइयाँ का प्रनाम, तप-भुइँ के आश्रम का प्रनाम।
आश्रम के जन जन का प्रनाम, बापू के चरनन मां प्रनाम॥

नारायण शर्मा

के इस जनपद में
सा दीप जलाया,
की भरी निशा में
को पथ दिखलाया।
सकी एक शिखा पर
ने मौन पुलक भर,
पना प्राण शलभ सा
इतनी बार चढ़ाया।

इसने यौवन - रस - मदमाती
अमित प्रमाद अलस तन्द्रा की,
निशि मनुहार मुँदी पलकों में
तीक्ष्ण प्रभा का तीर चुभाया।
तम का पारावार लाँघती
सतत जायँगी विश्व जगाने,
प्रथम जागरण की किरणें भी
ले इसके प्रकाश की छाया।

—श्री जगमोहननाथ अवस्थी 'मोहन'

विश्व वंद्य है देवदूत है
यह अवधूत हमारा,
अगणित कण्ठों से पुकारता
जिसे चराचर सारा।
खेल अनल से आत्म शुद्धि कर
हँस हँस गरल पिया है;
सत्य-अहिंसा का सम्बल ले
जग-पथ पार किया है।

हे भारत के कर्णधार तुम, कर्ण सदृश हो दानी;
अम्बर और अवनि में गूँजी, जय मोहन की वाणी।
भरे विश्व-बन्धुत्व भावना जग कल्याण लुटाते,
पग गति से ही चले विश्व का बैर-विरोध मिटाते।

तपोनिधे! तमपूर्ण विश्व में जला प्राण की बाती;
लाये हो स्वतंत्रता खोई मानवता की थाती।
मौन तुम्हारा विश्व-मौन बन नव परिवर्त्तन लाया;
और प्रगति से सोये युग ने नव-जीवन बल पाया।

हे दधीचि ! अस्थियाँ वज्र का मर्दन मान किये हैं ;
निज इंगित पर दुख गोवर्द्धन, मोहन सदा लिये हैं।
ओ उपवास निरत व्रत के बल सदा आत्म बल पाते ;
तुम्हीं देश दासता ग्रहण भी तपकर सदा मिटाते।

पूज्य तथागत हिंसाहत का, तुम पियूष ले आये ;
तथा जरा में यौवन की भी महाशक्ति भर लाये।
खादी कवचधार कर, करमें चर्खा-चक्र उठाये ;
द्वापर के मोहन कलियुग के मोहन बनकर आये।

दिल से कहा मुसलमानों ने पैगम्बर है आया ;
सिक्खों ने गुरु माना, करदी तलवारों की छाया।
ईसा ने अवतार लिया, सब ज्योति देखकर बोले ;
दलितों और अछूतों के भगवान मिले जय बोले।

कर्मवीर करुणामय गान्धी मानव सुर बन आये,
समा गये अगणित प्राणों में अगणित रूप बनाये।
वृद्ध राष्ट्र को तरुणाई दी, युग ने ली अँगड़ाई ;
मानवता को ज्ञान दिया, दी जीवन को अरुणाई।
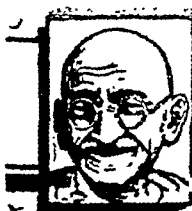
त्याग मूर्त्ति अनुराग मूर्त्ति जय-जय भारत वैरागी ;
दिव्य मूर्त्ति पावन विभूति तुमसे स्वतंत्रता जागी ।
बाँध दिया संसार सूत्र से सूत्रधार भारत के ;
निर्भयता का भाव जगाकर बने प्राण आरत के ।

अनिल, अनल, अम्बर गतिमय है, तुमसे अडिग तपस्वी ;
वही राग जग गाता जो तुम गाते राग मनस्वी ।
राष्ट्र नियन्ता ! मंत्र अहिंसा का वह अमर बनाया ;
राजा रंक अपावन पावन सब को एक बनाया ।

आत्म विजेता ! दया-दीप ! तुम भारत माँ की आशा ;
सत्य, एकता और अहिंसा की जीवित परिभाषा ।
युग हो प्रतिपल जीवन का युग में कल्पों की छाया ;
चिरंजीव हो जब तक है यह माया पति की माया ।

युगाधार ! हे दयाधाम ! है महिमा-ममता चेरी ;
हे युग के अवतार विश्व में, बाजी जय की भेरी ।
मुट्ठी भर हड्डियाँ किन्तु तुम, हो ब्रह्माण्ड हिलाते ;
धन्य शान्ति-संचालक ! पानी में तुम आग लगाते ।

आदर्शों पर प्राण लुटाने के पावन अभ्यासी !
अडिग हिमालय से अवतारी, असहयोग संन्यासी !
साहस-सुधा प्रदाता जय हो ! शान्ति-मंत्र के दाता ,
जय हो विषम-विषमता-हर्त्ता नवयुग के निर्माता ।

भारत वैभव केन्द्र अमर हो
सेवाग्राम तुम्हारा ,
रिद्धि-सिद्धि साधना बन गया
सेवा काम तुम्हारा ।
समय-सिद्ध-रथ पर चढ़ स्वर मय
मंगल गान सुनाता
जय हो ! जय हो ! जय हो ! जय हो !
भारत-भाग्य-विधाता ।

—श्री प्रह्लाद पाण्डेय 'शशि'

धाँय-धाँय जलती प्राणों में, हिंसा-प्रतिहिंसा की ज्वाला।
पहिन रहा फूलों के बदले, मानव नरमुण्डों की माला॥
बढ़ी मृत्यु की ओर जा रही, मानव की फौलादी क्षमता।
शासन करने लगे हृदय पर, स्वार्थ और अधिकार-विषमता॥

एक हाथ में लिये मुहम्मद, बुद्ध और ईसा की वाणी।
ढूँढ़ रहा ले शस्त्र दूसरे हाथ, मनुज नरता कल्याणी॥
त्याग अरे! देवत्व मनुजता, मानव दानवपन पर आये।
अरे असम्भव विश्व-शान्ति, परमाणु शक्ति-पूजन से आये॥

सदा देव ने दानव की चिर, बर्बर शक्ति मिटाना चाहा।
अपने दल के साथ भूमि पर, निष्कण्टक छा जाना चाहा॥
घोर प्रयत्न किये दानव ने, देव एक भी रहे न भू पर।
जय-जयकार करे मेरी ही, सारी धरणी सारा अम्बर॥

अरे युगों से देव-दनुज, विकराल युद्ध करते आये हैं।
किन्तु आज तक मिट न सके वे, मर-मर कर जीते आये हैं॥
देव-दनुज दो अभिशापों के, बीच 'मनुज' आया वरदानी।
जो दोनों के लिये निरन्तर, क्षमा, प्यार, ममता का दानी॥
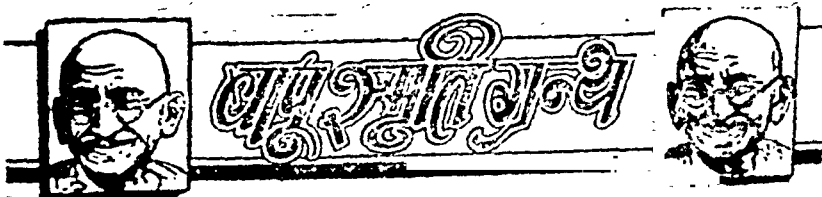
—श्री नटवरलाल 'स्नेही'

युग नायक! शत-शत अभिनन्दन!
युग-पुरुष! तुम्हें शत-शत वन्दन!

हम प्रलय-निशा के पार हुए—
प्रिय! आज तुम्हारे उजियाले,
तुमने स्वतन्त्रता देवी के—
मन्दिर के तोड़े हैं ताले;
जगमग-जगमग आलोक हुआ।
विद्युत-सा दमक उठा कन-कन।
युग-पुरुष! तुम्हें शत-शत वन्दन॥

तुमने जय-घोषों में बदला
अम्बर का भीषण घन-गर्जन,
तुम अचल रहे तुमसे टकरा
चल हुए अचल से उत्पीड़न;
शत-शत भूचाल न पद-रज के—
कण को भी दे पाये कम्पन।
युग-पुरुष तुम्हें शत-शत वन्दन॥

तुम स्नेह बने माँ के उर के
तुम दीप बने जग के पथ के,
शोषित मानव के त्राण बने
सारथी मनुजता के रथ के;
तुम विकल-विश्व के आशामय—
    अवरुद्ध प्राण के नव-स्पन्दन।
    युग-पुरुष! तुम्हें शत-शत वन्दन॥

है प्रथम स्वतन्त्र प्रभाती का,
अर्पण तुमको यह मंजुल स्वर,
यह नव-प्रभात की प्रथम किरण
है नमित तुम्हारे चरणों पर;
कोट्यावधि पुलकित पलकों की—
    आशाएँ करती हैं अर्चन।
    युग-नायक! शत-शत अभिनन्दन।
    युग पुरुष! तुम्हें शत-शत वन्दन॥

—श्री नाथूलाल भार्गव

छा रही कीर्ति-छटा चहुँ ओर
विश्व गाता जिसके गुण-गान।
आज गाँधी है नर-अवतार
गर्व है जिस पर हमें महान।

दया से ओत-प्रोत है हृदय
भूल जाते ईसा की याद।
दमन के कितने सहे प्रहार
कहें फिर क्यों न उसे प्रहलाद।

अहिंसा-युत सत्याग्रह ठान
दर्प अरि-दल का करके चूर।
हिलाये राजाओं के ताज
गर्व के गिरि-कर डाले धूर।

किसानों मजदूरों को साथ
लिये चल पड़े माँगने राज।
हाथ में नहीं एक भी शस्त्र
किन्तु दृढ़ ध्येय लिये जो आज।

विजय-श्री चरणों में दिन एक
विहँसकर लोटेगी पद चूम।
कि गायेंगे सब गरिमा-गान
विश्व में मच जायेगी धूम।

राम, गौतम, ईसा, गोपाल
मुहम्मद, सद्गुरु आदि समान।
अहिंसा सत्याग्रह के जनक
तुम्हें भी मानेंगे भगवान।

पुष्पा सक्सेना 'पुष्प'

मने जग को सजग बनाया, नव प्रकाश फैलाया।
ारत की भूली जनता को, सच्चापथ दिखलाया।
सत्य अहिंसा व्रती, यती तुम, तुमने ज्योति जगाई।

बापू का ही त्याग देश की
बन स्वतंत्रता आया,
ऊषा के आंगन में प्राची
का प्रभात मुस्काया;
ीप-शिखा बन अंधकार में, तुमने राह दिखाई।

चरखे का वरदान बन गया
चक्र सुदर्शन प्यारा,
मंत्र-मुग्ध हो झूम रहा है
जिस पर भारत सारा;
शासन-सत्ता के सुमनों की, 'पंखुड़ियाँ' बिखराई।

मानवता के जन्म, देश के कर्णधार बन आये।
और वन्दिनी माँ के बन्धन तुमसे ही खुल पाये।
तुमसा सुत पा भारत माता फूली नहीं समाई॥
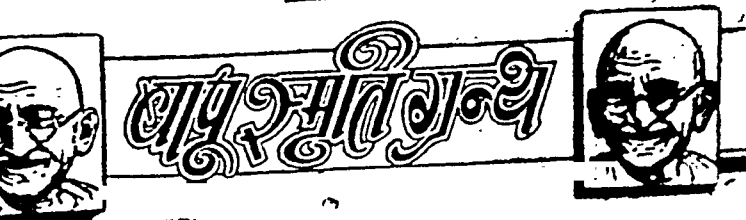
—श्री रामऋषि

तुम माँ के बन्धन खोल रहे।

मंगलमय पुण्य-प्रभाती की
जन-जाग्रति के सुकुमार विहग,
नूतन युग की आने वाली
मंजुल किरणों के प्यार सुभग,
जड़ता की माया पर अभिनव, जीवन की जय-ध्वनि बोल रहे।

दानवी शक्ति की दुर्निवार
यह लौह शृङ्खला, यह कारा,
होगई शिथिल, तुम बढ़े सबल
ले सत्य अभय का व्रत प्यारा,
बन्धन में मुक्त पुरुष जैसे, पशुता का हृदय टटोल रहे।

जो भूल चुके थे पथ अपना
उनको नव-दृष्टि-दिशा दी है,
युग-युग से सोती आई जो
तुमने वह जाति जगा दी है,
जीवन गतिमय, जननी की जय, उठ मूक बधिर भी बोल रहे।
तुम माँ के बन्धन खोल रहे॥

—सुश्री शीलवती देवी

कि अपने राष्ट्र के अधि-देवता की अर्चना करने
सुकोमल भावनाओं के सुमन लेकर चढ़ाऊँगी।

नहीं हैं शब्द भी सुन्दर
सरसता भी नहीं स्वर में
लिये हूँ किन्तु श्रद्धा भक्ति-
के कुछ भाव अन्तर में

कि युग के देवता की आज मैं अभ्यर्थना करने-
हृदय-तन्त्री बजाकर कुछ न कुछ तो गुनगुनाऊँगी।
कि अपने राष्ट्र के अधि-देवता की अर्चना करने-
सुकोमल भावनाओं के सुमन लेकर चढ़ाऊँगी।

नहीं है शक्ति इतनी, साधना
अपना सकूँ उसकी,
नहीं है भक्ति इतनी भी
कि पद-रज पा सकूँ उसकी;

भले ही मिल न पाये किन्तु अपने शीश पर धरने।
चरण-रज प्राप्त करने के लिये कर तो बढ़ाऊँगी।
कि अपने राष्ट्र के आधिदेवता की अर्चना करने
सुकोमल भावनाओं के सुमन लेकर चढ़ाऊँगी।

न श्रद्धा के कभी दो फूल
भी यदि कर सकी अर्पण,
न हो पाये कभी जी भर
सुलभ यदि देव के दर्शन;

यही सोचा है तो उसकी अथक आराधना करने
कि मन-मन्दिर में अपने ही, सुभग प्रतिमा सजाऊँगी।
कि अपने राष्ट्र के अधि-देवता की अर्चना करने
सुकोमल भावनाओं के सुमन लेकर चढ़ाऊँगी।

—श्रीकृष्ण 'सरल'

भारत-नौका के कर्णधार
बापू ! तुमको शत-शत प्रणाम !
हे विश्व-बन्धु, हे मुक्ति-द्वार !
बापू ! तुमको शत-शत प्रणाम !

तुमने निज त्याग तपस्या से, वसुधा को स्वर्ग बनाया है,
जो रहा असम्भव वह तुमने, सम्भव करके दिखलाया है।
युग-युग तक याद रहेगा जो, तुमने वह पाठ पढ़ाया है,
पशुता के युग में तुमने ही, मानवता को अपनाया है।

तुम सारे जग के वन्दनीय
हो गये आज हे पूर्ण काम !
भारत-नौका के कर्णधार
बापू ! तुमको शत-शत प्रणाम।

इस पावन पुण्य-भूमि पर जब, पापों का पारावार बढ़ा,
अपनी पूरी भीषणता से, अत्याचारों का भार बढ़ा।
जब निज विनाश की ओर तीव्र गति से सारा संसार बढ़ा,
दानवता का साम्राज्य और दीनों का हाहाकार बढ़ा—

तब बढ़ा तुम्हारा वरद-हस्त
हे महापुरुष ! हे पुण्य-नाम !
भारत-नौका के कर्णधार
बापू ! तुम को शत-शत प्रणाम !

हे सत्यव्रती ! हे महायती ! तुमने सब का उद्धार किया ;
तुमने न कभी अन्तर समझा, अन्तर से सब को प्यार किया ।
तुमने जीवन भी दिया और, जीने का भी अधिकार दिया ,
तुमने अपने बलिदानों से, भारत का भार उतार दिया ।

है आज तुम्हारे ही गौरव
से गर्वित जन-जन धाम-धाम ।
भारत नौका के कर्णधार ,
बापू ! तुमको शत-शत प्रणाम !

इस युग के हे दानी दधीचि, क्या तुमने है कम दान दिया ;
तन, मन, धन, जन जीवन सब कुछ, तुमने अपना बलिदान किया ।
तुमने जग के अभिशापों को, लेकर सदैव वरदान दिया ,
हम को तो सुधा पिलाही दी, चाहे तुमने विष-पान किया ।

तुमने कठोरता सही स्वयं
पर हमको दी मृदुता ललाम।
भारत-नौका के कर्णधार
बापू! तुमको शत-शत प्रणाम!

तुम कभी नहीं भयभीत हुये, जगती के प्रबल प्रहारों से,
तुमने सदैव ही प्यार किया, उन भीषण कारागारों से।
जिनमें दुर्दान्त यातनाओं के दमन चक्र की मारों से,
है दलित किया जाता दीनों-हीनों को अत्याचारों से।

तुमतो उनकी ही ओर बढ़े,
तुमने न लिया किंचित विराम।
भारत-नौका के कर्णधार,
बापू! तुमको शत-शत प्रणाम!

कहता है तुम्हे कौन निर्बल? तुम तो हो महाशक्तिशाली,
तुमने सिंहासन झुका दिये, जगती की नींव हिला डाली।
तुमने जो अस्त्र चलाया है तुमने जो नई नीति पाली,
कब उसका हुआ प्रहार विफल, कब उसका गया वार खाली?

भीषण हुंकार तुम्हारी सुन,
बैठे बलशाली हृदय थाम।
भारत-नौका के कर्णधार,
बापू! तुमको शत-शत प्रणाम!

लो आज तुम्हारे त्याग-तपश्चर्या से ही यह दिन आया,
यह पुण्य-बेलि बोई तुमने, पर हमने उसका फल खाया।
हो गया आज स्वाधीन देश, बन्धन की तड़क गईं कड़ियाँ,
हमने पाईं हैं मोदमयी, जीवन की ये मंगल घड़ियाँ।

हर्षोन्मत्त जन-जन का मन,
हर्षोन्मत्त हैं नगर ग्राम।
भारत-नौका के कर्णधार,
बापू! तुमको शत-शत प्रणाम!

गान्धी-स्मृति-ग्रन्थ

श्री मैथिलीशरण गुप्त

अरे राम! कैसे हम झेलें,
अपनी लज्जा उसका शोक।
गया हमारे ही पापों से;
अपना राष्ट्र-पिता परलोक!
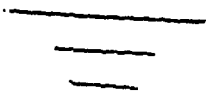
—श्री सुमित्रानन्दन पन्त

जड़वाद जर्जरित जग में तुम
अवतरित हुए आत्मा महान!
यन्त्राभिभूत युग में करने
मानव जीवन का परित्राण।

बहु छाया बिम्बों में खोया
पाने व्यक्तित्व प्रकाशमान;
फिर रक्त माँस प्रतिमाओं में
फूँकने सत्य से अमर प्राण!

संसार छोड़कर ग्रहण किया
नर-जीवन का परमार्थ सार;
अपवाद बने मानवता के
ध्रुव नियमों का करने प्रचार!

हो सार्वजनिकता जयी, अजित!
तुमने निजत्व निज दिया हार,
लौकिकता को जीवित रखने
तुम हुए अलौकिक हे उदार!
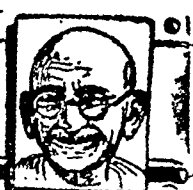
—श्रीमती महादेवी वर्मा

हे धरा के अमर सुत ! तुमको अशेष प्रणाम !
जीवन के अजस्र प्रणाम !
मानव के अनन्त प्रणाम !

दो नयन तेरे धरा के अखिल स्वप्नों के चितेरे,
तरल तारक की अभा में बन रहे शत-शत सवेरे,
पलक के युग शुक्ति-सम्पुट मुक्ति-मुक्ता से भरे ये,
सजल चितवन में अजर आदर्श के अंकुर हरे ये,
विश्व-जीवन के मुकुर दो तिल हुये अभिराम !
चल-क्षण के विराम ! प्रणाम !

कर युगल बिखरे क्षणों की एकता के पाश जैसे,
हार के हित अर्गला, तप-त्याग के अधिवास जैसे,
मृत्तिका के नाल जिन पर खिल उठा अपवर्ग-शतदल,
शक्ति की पवि-लेखनी पर भाव की कृतियाँ सुकोमल,
दीप-लौ-सी उँगलियाँ तम-भार लेतीं थाम।
नव आलोक-लेख ! प्रणाम !

शेष शोणित बिन्दु नत भू-भाल पर है दीप्त टीका,
यह शिरायें शीर्ष रसमय कर रहीं स्पन्दन सभी का,
ये सृजन, जीवी वरण से मृत्यु के कैसे बनीं हैं ?
चिर सजीव दधीचि ! तेरी अस्थियाँ सञ्जीवनी हैं !
स्नेह की लिपियाँ दलित की शक्तियाँ उद्दाम !
इच्छाबद्ध मुक्त ! प्रणाम !

चीर कर भू व्योम की प्राचीर हों तम की शिलायें,
अग्नि-सर सी ध्वंस की लहरें गलादें पथ दिशायें,
पग रहे सीमा, बने स्वर रागिनी सूने निलय की,
शपथ धरती की तुझे औ' आन है मानव-हृदय की,
यह विराग हुआ अमर अनुराग का परिणाम !
हे असिधार-पथिक ! प्रणाम !

ी सियारामशरण गुप्त

निखिल स्वदेश, हाय! तेरे नेत्र गीले थे,
तेरे स्वर-तार सभी ढीले थे,
दुर्निवार-वेदना व्यथा से है व्यथित तू,
उर में अशान्त उन्मथित तू!
वायु का प्रवाह रुका तेरे धरातल में,
ज्योति म्लान सी है नभस्थल में
देखकर हाय महाजीवन का ऐसा अन्त!

अन्त! अरे कौन, कहाँ कैसा अन्त?
श्री गणेश यह है नवीन के सृजन का,
आद्यत्तर नव्य-भव्य-जीवन का;—
जिसके निमित्त सब धीर धनी भिक्षुक हैं,
निखिल तपस्विजन इच्छुक हैं;
जिसकी शुभाशा लिये मन में
कितने प्रवीर परिश्रान्त हैं भ्रमण में,
नश्वरता जिसमें हुई है अविनश्वरता,
मृत्यु में हिली-मिली अमरता!

हार कहाँ, उसमें कहाँ है हार ?
अन्त के दिगन्त तक उसका महाप्रसार।
आज के ही आज में उसे न देख;
उसका विजय लेख
काल की तरंगोत्ताल–माला में लिखित है,
अगम अनन्त में ध्वनित है !

उठ रे अरे ओ धर्म, कर्म, धृति, ध्यान, ज्ञान
धन्य वह कालजयी कीर्तिमान,—
काल की कसौटी पर जिसका सुहेमचिह्न ;
जिसने किया है महातंक छिन्न
विश्व के प्रपीड़ितों के अन्तर से ;
बोध का प्रदीप दीप्त करके
जिसने दिखाया—दीन दुर्बल नहीं है हीन,
वह है निरस्त्र भी महत्वासीन
अपने अजेय आत्म बल से ;
अन्य के जघन्य छद्म छल से

मुक्त सर्वथैव वह एकमात्र स्वेच्छाधीन।
देख अरे देख उसे, वह है नहीं विलीन!
वह है स्वकीय जन-जन का,
गुञ्जित हो मंगल की भाषा में
निश्चित द्विधविहीन जागरित आशा में
वह है भुवन का!

उठ रे अरे ओ गान,
धन्य वह कालजयी कीर्तिमान,
भीति भय से स्वतंत्र,
आत्म-बलिदानी वह—
जिसने जपा है महत् प्राणमन्त्र;
अक्षय है उसका अपूर्व दान,
जागृत हो आज धर्म, कर्म, धृति, ध्यान, ज्ञान!
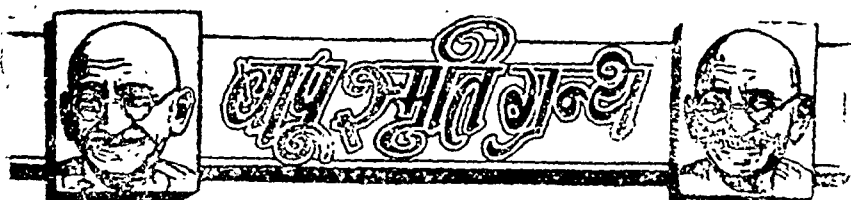
—डा० रामकुमार वर्मा

आज कैसी ज्योति है इस
दीप के निर्वाण में।
कालिमामय मरण भी है
खोगया इस प्राण में।

सत्य का आलोक भर कर, स्नेह का प्रिय दीप जो था।
दूर रहकर भी अँधेरे में, सदैव समीप जो था।

इस तरह युग-युग जला
वह देश के निर्माण में।
आज कैसी ज्योति है इस
दीप के निर्वाण में।

जब कि सदियों से भरी परतन्त्रता की रात बीती।
प्राण दीपक बुझ गया, जब भाग्य-लिपि की घात जीती॥

देवता था वह, बना
मानव हमारे त्राण में
आज कैसी ज्योति है इस
दीप के निर्वाण में।
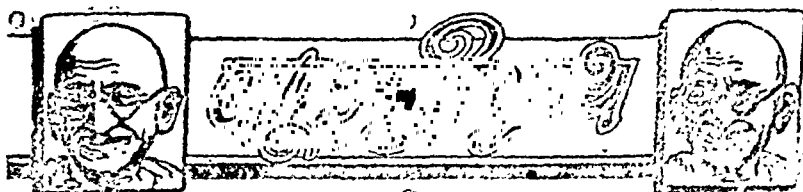
—श्री 'बच्चन'

उसने अपना सिद्धान्त न बदला मात्र लेश,
पलटा शासन, कट गई कौम, बँट गया देश,
वह एक शिला थी निष्ठा की ऐसी अविकल,
सातों सागर
का बल जिसको
दहला न सका।

छा गया क्षितिज तक अंधक-अंधड़-अंधकार,
नक्षत्र, चाँद, सूरज ने भी ली मान हार,
वह दीप-शिखा थी एक ऊर्ध्व ऐसी अविचल,
उंचास पवन
का वेग जिसे
थिठला न सका।

पापों की ऐसी चली धार दुर्दम दुर्धर,
हो गये मलिन निर्मल से निर्मल नद निर्झर,
वह शुद्ध क्षीर का ऐसा था सुस्थिर सीकर,
जिसको कांजी
का सिन्धु कभी
बिलगा न सका।

—श्री जगन्नाथ प्रसाद 'रमालन्द'

श्वास न केवल वह जिसकी
धड़कन हो उर के पास
श्वास वास्तविक है मानव की
'लक्ष्य' और 'विश्वास'

छीन सका क्या घातक, गाँधी का अविचल विश्वास,
गिरि-सा उच्चादर्श, विमल हिम-सा वह अक्षय हास।
सब कुछ अजर अमर बापू का, हास, लक्ष्य, विश्वास;
जन-जन के मन-मन में फैला बन कर शुभ्र प्रकाश।

और कालिमा अपनी
समझेगा उसको इतिहास,
जिस कायर ने उस शरीर का
छल से किया विनाश।

केवल आत्मा के स्वर से भरकर भूगोल खगोल,
गान्धी ने शरीर का समझा था कितना सा मोल।
जीवन भर जो रहा घूमता निज वक्षस्थल खोल;
उसकी निर्भयता के आगे, हिंसा का क्या मोल?

रक्त-माँस को गान्धी समझा
इतनी भारी भूल,
गान्धी तो है निज युग की
संस्कृति का व्यापक मूल।

सर्वश्रेष्ठ मानव की कहलाई यह जग में खान,
गान्धी ने इसको दिलवाया था अपूर्व सम्मान।
घातक ने भारत माता का करवाया अपमान;
जग का सबसे पतित मनुज भी है इसकी सन्तान।

मानवता के इस कलंक की
लज्जा का इतिहास,
जन्मभूमि युग-युग तक ढो-
ढोकर लेगी उच्छ्वास।

कोटि कोटि मनुजों के उर में, था उसका जो प्यार,
बरबस बहा, आँसुओं का घन घन कर पारावार।
भूमण्डल के कोने-कोने से आई आवाज़;
मानवता का त्राता गाँधी, हाय कहाँ है आज?

देशवासियो ! उत्तर दो सब
रोक अश्रु उच्छ्वास,
सदा हमारे हृदयों में
होगा गान्धी का वास।

पूरा करो, अधूरा है जो उसका प्यारा काम,
कल्मष, बर्बरता, हिंसा से, करो अथक संग्राम !
प्राण लगाओ, रक्त लगाओ और लगाओ स्वेद !
नव-जग का निर्माण करो, संयत कर उर का खेद।

जिस विष ने संचित हो-हो
बापू पर किया प्रहार,
तुम्हें मुक्त उस विष से करना
है सारा संसार।

—श्री रामधारी सिंह 'दिनकर'

टूटा पर्वत-सा महावज्र, सब तरह हमारा ह्रास हुआ,
रोने दो, हम मर-मिटे हाय, रोने दो सत्यानाश हुआ।
है तरी भँवर के बीच और पतवार हाथ से छूट गई;
रोने दो हाय, अनाथ हुए, रोने दो किस्मत फूट गई;

कैसा अभाग्य! अपने हाथों ही हाय स्वयं हम छले गये,
यह भी न पूछ सकते, बापू! क्यों हमें छोड़ तुम चले गये?
पापी तूने क्या किया हाय? किस पर यह दारुण वार किया?
यह वज्र गिराया कहाँ हाय? किसका अकरुण संहार किया?

वह देख फटी किसकी छाती? पहिचान कौन निश्चेत गिरा?
किसकी किस्मत में आग लगी? किसका उगता सौभाग्य फिरा?
यह लाश मनुज की नहीं, मनुजता के सौभाग्य विधाता की
बापू की अरथी नहीं, चली अरथी यह भारतमाता की।

तप से पवित्र वह देह और वह हँसी अमृत देने वाली,
चालीस कोटि की नौका को वह एक मूर्ति खेने वाली,
अब नहीं मिलेगी कहीं, नयन! दर्शन की व्यर्थ न आस करो,
बापू सचमुच ही चले गये, भोली श्रुतियो विश्वास करो।

बापू सचमुच ही गये, निखिल भूमण्डल का शृङ्गार गया,
बापू सचमुच ही गये, विकल मानवता का आधार गया।
बापू सचमुच ही गये, जगत से अद्‍भुत एक प्रकाश गया;
बापू सचमुच ही गये, मृत्ति पर से हरि का आभास गया।

किरणें समेट फिर रवी एक भूतल को कर श्रीहीन चला,
फिर एक बार मोहन यसुदा को सभी भाँति कर दीन चला।
यह अवधपुरी के राम चले, वृन्दावन के घनश्याम चले,
शूली पर चढ़कर चले ख्रीष्ट, गौतम प्रबुद्ध निष्काम चले।

प्यासे को शोणित पिला, तोड़ कोई अपनी जंजीर चला,
दानव के दंशों पर हँसता, यह स्वर्ग-देश का वीर चला।
धरती को आकुल छोड़, मनुजता को करके म्रियमाण चले,
बापू दे अन्तिम बार जगत को हृदय-विदारक दान चले।

आकाश विभूपित हुआ, भूमि से हरि का लो! अवतार चला,
पृथ्वी को प्यासी छोड़ हाय, करुणा का पारावार चला।
चालीस कोटि के पिता चले, चालीस कोटि के प्राण चले,
चालीस कोटि हतभागों की आशा, भुजबल, अभिमान चले।

यह रूह देश की चली ! अरे, माँ की आँखों का नूर चला ;
दौड़ो, दौड़ो, तज हमें हमारा बापू हमसे दूर चला।
रोको, रोको, नगराज ! पन्थ, भारतमाता चिल्लाती है,
है जुल्म ! देश को छोड़ देश की किस्मत भागी जाती है।

अम्बर की रोको राह, बढ़ो, नगराज शून्य में जा ठहरो,
बापू यह भागे जाते हैं, चरणों को बढ़ पकड़ो-पकड़ो।
पकड़ो वे दोनों चरण, पकड़ कर जिन्हें हमें सौभाग्य मिला,
पकड़ो वे दोनों चरण, जिन्हें छूकर जीवन का कुसुम खिला।

पकड़ो वे दोनों चरण, दासता जिनके सेवन से छूटी,
पकड़ो वे दोनों पद जिनसे आजादी की गंगा फूटी।
जल रहा देश का अंग-अंग, शीतल घन को पकड़ो-पकड़ो,
भारत माता कंगाल हुई, जीवन-धन को पकड़ो-पकड़ो।

है खड़ा चतुर्दिक, काल, दासता-मोचन को पकड़ो-पकड़ो,
माता खा गिरी पछाड़, भागते मोहन को पकड़ो-पकड़ो।
है बीच धार में नाव, खबर है प्रलय-वायु के आने की,
थी यही घड़ी क्या हाय, हमारे कर्णधार के जाने की ?

दौड़ो, कोई जा कहो, नाव किस्मत की डूबी जाती है,
बापू ! लौटो, आँचल पसार भारतमाता गुहराती है।
किस्मत का पट है तार-तार, हा इसे कौन सी पायेगा ?
बापू ! लौटो यह देश तुम्हारे बिना नहीं जी पायेगा।

अपनी विपन्नता की गाथा यह रो-रो किसे सुनायेगी ?
बापू ! लौटो, भारतमाता रो बिलख-बिलख मर जायेगी।
दुनिया पूछेगी कुशल हाय, किससे क्या बात कहेंगे हम ?
बापू ! लौटो, सिर झुका ग्लानि का कैसे दाह सहेंगे हम ?

लौटो, अनाथ के नाथ, देश की ईति-भीति हरने वाले,
लौटो, हे दयानिकेत देव ! शत पाप क्षमा करने वाले।
लौटो, दुखियों के प्राण ! निःस्व के धन ! लौटो निर्बल के बल !
लौटो, वसुधा के अमृतशेष ! लौटो भारत के गंगाजल !

लौटो, बापू ! हम तुम्हें मृत्यु का वरण नहीं करने देंगे,
जीवन-मणि का इस तरह काल को हरण नहीं करने देंगे।
लौटो, छूने दो एक बार फिर अपना चरण अभयकारी,
रोने दो पकड़ वही छाती, जिसमें हमने गोली मारी।

करुणा की सुनो पुकार, फिरो या अपनी बाँह दिये जाओ,
संतप्त देश को राम-सदृश हे बापू ! साथ लिये जाओ।

—श्री शिवमंगलसिंह 'सुमन'

क्या सुना आज इन कानों ने
मेरे बापू तुम नहीं रहे,
युग-युग के बापू नहीं रहे
जन-जन के बापू नहीं रहे।

विश्वास नहीं होता सचमुच
उर की धड़कन कहती रुक रुक
जब तक ऊसर हैं पग-पग में
हिम गिरि कैसे ढह सकता है?
जब तक अँधियारा है जग में
दिन कर कैसे बुझ सकता है?
जब तक दुर्योधन गृह-गृह में
चिर सत्य अहिंसाव्रती रथी
पथ पर कैसे रुक सकता है?

(७)

दीनों के बन्धु, पतित पावन
निरवधि करुणा के धाम अमर।
तुम जन-मन-मन्दिर के रघुपति
तुम राघव-राजाराम-अमर।

(८)

जिसकी स्मृति से चिर शत्रु वधू
भरती निज नयन-सरोज युगल,
उसके जीवन की धारा थी
उस मधुर सत्य की खोज विकल।

(९)

जिसके आगे दुर्धर्ष प्रकृति
पशु-बल की नत मस्तक होकर,
प्रमुदित अनुनय की अञ्जलि में
पीती है आज चरण धोकर।

(१०)

कण एक उन्हीं के पदरज का
यह नर पशुता यदि पा जाती,
अपने संचित शत जन्म कलुष
क्षण भर में आज मिटा पाती।

(११)

था इन्द्र तुम्हारा वज्र कहाँ?
थे राम तुम्हारे बाण कहाँ?
सब जिन्हें देवता कहते थे,
वे मन्दिर के पाषाण कहाँ?

(१२)

क्यों उस गजेन्द्र उद्धारक की
बाहों में पक्षाघात हुआ,
जब मानवता के प्यारे पर
वह वक्ष-विदारक घात हुआ।

(१३)

निर्व्याज क्षमा के अवयव पर
क्यों वज्र गिराने वाले की,
गलकर न गिरीं वे अँगुलियाँ
पिस्तौल चलाने वाले की।

(१४)

उस दिन हजार फणवाले ने
इस अघ से बोझल धरणी को,
क्यों फेंक न दिया तमोदधि में
अर्पित न किया वैतरणी को ?

(१५)

फट गई न धरती की छाती
फट गया न क्यों आकाश-हृदय ?
मच गया न भैरव कम्पन से
क्यों पंचभूत में महाप्रलय ?

(१६)

जब जगद्वन्द्य उन प्राणों पर
उस पापी की पिस्तौल चली,
जब छिन्न हृदय से बापू के
वह प्रथम लहू की बूँद गिरी।

(१७)

उस एक बूँद का दाम सुनो
भर भर सदियों की गागर से,
अब दे न सकेगी मानवता
अपने शोणित के सागर से।

(१८)

क्या मानवता की वेदी पर
करुणा की यही मनौती थी,
या सभ्य कहाने वालों को
पशुता की खुली चुनौती थी।

(३१)

है यहाँ दीन असहायों की
रक्षा में प्राण गवाना ही,
मानव का मानवता के हित
अमरत्व यहाँ मर जाना ही।

(३२)

मानव समाज की सेवा ही
जिनका सुन्दर-तम गहना है,
बस एक क्षमा का आभूषण
ही जिन पुरुषों ने पहिना है।

(३३)

आरम्भ जहाँ से होते हैं
मानवता के इतिहास भले,
अनजान चेतना वाले भी
उन आदि युगों के कुछ पहले-

(३४)

मन के अति निष्ठुर मानव को
जङ्गल के हिंसक प्राणी को,
जिसने करुणा का मंत्र दिया
बर्बरता की उस वाणी को।

(३५)

नवजात सभ्यता के शिशु को
दो डग भरना सिखलाया है,
संस्कृति के पहले अरुणोदय
में जिसने विश्व जगाया है।

(३६)

उन ऋषियों की संतान तुम्हें
प्यारा उनका आदर्श रहे,
सौ बार अधिक मन प्राणों से
प्यारा यह भारतवर्ष रहे।

—श्री गिरिजा कुमार माथुर

सूरज डूब गया धरती का, सायंकाल हुआ,
काल-पुरुष मिट गया, धरा का सूना भाल हुआ।

आदि ज्योति उठ गई आज,
मिट्टी के घेरे पार;
युग की अक्षय आत्मा सिमटी,
बनी एक चीत्कार।

आज समय के चरण रुक गये,
हुई प्रलय की हार;
महा पूर्णता मानवता की,
छोड़ गई संसार।

मर कर मानव अमर बना, लघु रूप विशाल हुआ।

रुग्ण धरा पर जमी हुई थी,
सदियाँ घन प्राचीर;
मानवता पर कसी युगों से
पापों की जंजीर।

ईसा-बुद्ध खड़े नत सिर
थी खिंची शक्ति-शमसीर;
तुमने धरती के माथे से,
पोंछी रक्त-लकीर।

मृत प्रतिमा जागी, जीवित जग का कंकाल हुआ।

एक अशेष दुखद सपने-सा,
उलझा था संसार;
दिन में जले दीप सा जीवन,
हतचेतन, निस्सार।

मिट्टी की चिर सृजन शक्ति का,
ले विराट आधार;
तुम हर कन से उठा सके,
मानवता के अवतार।

पथ की हर पद-चाप क्रान्ति, हर चिन्ह मसाल हुआ।

थकी ज्योति का तिमिर-ग्रसित,
संघर्ष हुआ गतिवान;
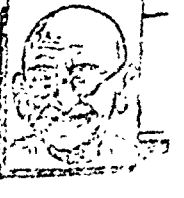
इतिहासों के अंधकार से,
उठ आया इंसान।
हार गई आत्मा पर आकर,
पशुता की चट्टान;
कष्टों से पंकिल मानवता,
उठी बनी हिमवान।
जनता हुई अजेय, नया जीवन जयमाल हुआ।

किन्तु तिमिर फिर उभरा,
करने अन्तिम अस्त्र प्रहार;
धर्म, जाति हिंसा को लेकर,
तड़क-सी तलवार।
मनुज जला, शैतान उठा,
देवत्व हो गया छार;
साम्राजी बीजों से उगे,
शस्त्र-समान विचार।
अन्तिम आहुति पूर्ण हुई, अन्तिम कर लाल हुआ।

सहसा विष के दीप बुझ गये,
बुझे गरल - तूफान,
भस्म हुआ तम, कर प्रकाश की,
रक्त अग्नि का पान।
तप में रची अस्थियों से,
जन-वक्ष हुआ निर्माण;
मिट्टी नवयुग, तन का हरकन,
रवि की नई उठान।
तुमने मर कर मृत्यु मिटादी, विश्व निहाल हुआ।
सूरज डूब गया धरती का, सायंकाल हुआ।

—श्री हरिकृष्ण 'प्रेमी'

आज सारा विश्व रोता है
कि गाँधी मर गया है,
मर गया है किन्तु जीवन
को अमर वह कर गया है।
दीप को बुझते हुए देखा
अँधेरा भी हुआ है,
किन्तु प्राणों में प्रखर तर
वह उजाला भर गया है।

हिल नहीं सकते अधर द्वय
कण्ठ भी है मौन उसका,
किन्तु मुखरित मौन जग में
भर मधुरतर स्वर गया है।
मौत भी शरमा रही है
युग पुरुष पर वार करके,
कूल उसका जिन्दगी का
भर सरस निर्झर गया है।

छीन सकता जुल्म किसका
युग-पुरुष की रूह हमसे,
जो कि दिल-दिल में हमेशा
के लिये कर घर गया है।
वह इशारा कर रहा है
वह इशारा कर रहा है,
कौन कहता है कि हमको
छोड़ कर रहबर गया है।

विश्व सारा देह उसकी
और वह जग चेतना है,
प्राण का बलिदान दे
इंसान बन ईश्वर गया है।

—पं० श्रीनारायण चतुर्वेदी

आज गिरि का शृङ्ग टूटा।
आज भारत-भाग्य फूटा,
विश्व के आकाश का
सबसे बड़ा नक्षत्र टूटा।

सिहर उट्ठी हैं शिरायें
रुक गई है रक्त की गति,
नयन, दृष्टि विहीन से हैं
क्षुब्ध, मानस की हुई मति।

बुद्ध था, करुणा द्रवित स्वर
कह रहा था अरे मानव,
क्रोध को अक्रोध से तू
जीत, बन मत भीत, दानव।

कृष्ण के स्वर गूँजते थे
कर्म कर निष्काम, रे नर!
दुःख सुख का ध्यान मत कर
व्याध ने छोड़ा प्रखर शर।

क्षमा के अधि-देवता ने
वधिक के भी हाथ जोड़े,
प्रज्ञ-स्थित वैष्णव परम ने
'राम' कह कर प्राण छोड़े।

शोक आकुल उरों का वह
एक ही विश्राम-स्थल था,
दलित पीड़ित मानवों का
एक ही आधार बल था।

राष्ट्र ही अपना नहीं यह
किन्तु मानव जाति सारी,
मुक्ति पायेगी वरे, यदि
भक्ति चरणों की तुम्हारी।

—श्री 'बेधड़क' बनारसी

ज़िन्दगी रहते सब को प्यार किया बापू ने,
मौत का भी न तिरस्कार किया बापू ने।
बेधड़क अपने हत्यारे को उसी क्षण बढ़कर-
मरते मरते भी नमस्कार किया बापू ने।
सत्य की ढाल, अहिंसा का शस्त्र लेकर के,
विश्व पर सहज था अधिकार किया बापू ने!
बेधड़क हमको बनाया है जो डरपोक रहे,
हम गुलामों का परोपकार किया बापू ने।
सामने तेज के उसके सदा अंगरेज झुके,
यह अनोखा था चमत्कार किया बापू ने।
उस बवण्डर में, उस तूफान में उस आँधी में,
डूबती नाव, उसे पार किया बापू ने।

× × ×

लगी है चोट कितनी यह हृदय ही जानता बापू!
कि मानव नीच है इतना, न था हमको पता बापू!
यहाँ जीते हुये भी 'बेधड़क' हम हो गये हैं पशु-
अमर मर कर हुये तुम आज नर से देवता बापू!

—सुश्री सुमित्रा कुमारी सिनहा

तुम दिग्-दिगन्त में वन्दित हो ?
हे विश्वात्मा बापू अनन्त, मंगल बन विश्व-प्रतिष्ठित हो ;
तुम दिग्-दिगन्त में वन्दित हो ?

पा रक्तामृत का दान पूत
भू होगी युग-युग तक कुसुमित ;
हे महातेज ! जग पथ को तुम
कर गये सदा को आलोकित ;
तुम अर्चनम से सम्त, आज विजयों से भी अपराजित हो ।
तुम दिग्-दिगन्त में वन्दित हो ?

यह नहीं कि वरद्-हस्त-छाया
अब हमें नहीं मिल पायेगी,
वह मधु-स्मित विस्तृत अम्बर पर
तारे बन कर खिल छायेगी ;
दो हाथों में तुम सीमित थे, पर जग में आज असीमित हो ।
तुम दिग्-दिगन्त में वन्दित हो ?

इस सत्य, अहिंसा, शांति-मार्ग -
पर विश्व चलेगा युग-युग तक,
हे अनासक्त ! जग तव पद की
अनुरक्ति पलेगा युग-युग तक,
तुम तेज अलौकिक बन जगती, के कण-कण में प्रतिभासित हो।
तुम दिग्-दिगन्त में वन्दित हो ?

तुम जहाँ गिरे, वह केन्द्र हुआ
ऊँचा उठने का मानव का,
शोणित-बूँदों ने धो डाला
सब पाप विश्व के दानव का ;
तुम हो अदृश्य पर कोटि जनों के नयनों में परिलक्षित हो।
तुम दिग दिगन्त में वन्दित हो ?

—श्री शालिग्राम मिश्र

इतना स्नेह उँडेल गये हो, दीपक सदा जलेगा।

दुर्गम-पंथ, गहन-तम कानन, सर सरिता, गिरि गह्वर,

नई दिशा निर्माण कर गये, तोड़ तोड़ कर पत्थर,

देख देख पद-चिह्न तुम्हारे, मानव सदा चलेगा।

इतना स्नेह उँडेल गये हो, दीपक सदा जलेगा।

हे दुर्बल-तन, दृढ़ मन तुमने, स्वर्ग उतारा भू पर,

हे मानवता-व्रती! भुला अपनत्व, उठ गये ऊपर,

सत्य धर्म की वरद-छाँह में जीवन सदा पलेगा।

इतना स्नेह उँडेल गये हो, दीपक सदा जलेगा।

स्वर्ण किरण से उतर भूमि पर, कण-कण अलोकित कर,

जीवन और मरण दोनों में, सतत एक से सुन्दर,

इतना स्नेह उँडेल गये हो, दीपक सदा जलेगा।

देख देख पद-चिह्न तुम्हारे, मानव सदा चलेगा।

सत्य धर्म की वरद-छाँह में, जीवन सदा पलेगा।
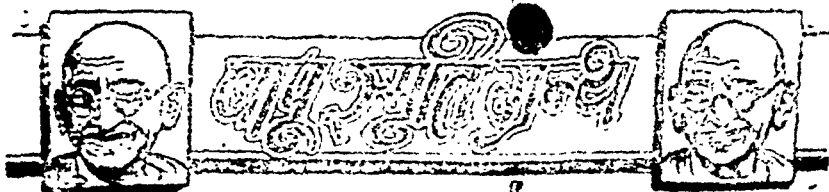
—श्री सोहनलाल द्विवेदी

ंदू खुलकर कहो, हो गया भंग आज सब सुख-सपना।
ा आज सर्वस्व हमारा, गया आज बापू अपना!
हू! अपना हृदय खोलकर देख कौन तेरा है आज?
र पर तू अभिमान करे वे, चले गये गान्धी महाराज!
मुसलमान! रक्षक न तुम्हारा, रहा आज कोई जग में
कहाँ आज त्राता, जो अपने प्राण बिछाये आ मग में।
सिक्ख! आज किसकी जय करने के हित नग्न कृपाण लिये?
कहाँ सो गये तुम अचेत हो, जब कि वधिक ने प्राण लिये?
के भक्तो! ईसा की कौन सुनायेगा वाणी?
दया, करुणा की वर्षा, हो न सकेगी कल्याणी।
शेया! प्रकाश बुझ गया, तेरी राह अँधेरी है।
सका संकेत कहेगी, 'आज विजय यह मेरी है?'
खण्ड-खण्ड हो धरा, धैर्य अब तुझको कौन बँधायेगा?
क्या कहती है जन्म भूमि! मन मोहन कहीं न जायेगा।
कहीं नहीं वह गया महात्मा, समा गया है मन-मन में।
अमर-प्रकाश-पुञ्ज आलोकित है जननी के जन-जन में।

—श्री शम्भूनाथ 'शेष'

आज सजल है अन्तर-लोचन,
भाव जगत् है कजलाया सा।
धुँधियाई सी रजत-निशा है,
स्वर्ण दिवस है सँवलाया सा।

तरु-तरु है प्रतिमा विषाद की, वृन्तों पर छाई जड़ता सी;
पात-पात संज्ञा-विहीन है, मधु कलियाँ हैं हीन-प्रभा सी।
भू-लुण्ठित तृण गुल्म लता सब, पुष्प-निचय दावाग्नि बरसता;
नियति नटी के रंग भवन में, छाई है चहुँ ओर उदासी।
बापू के निर्वाण-शोक में, मधु का दिन है अमा-निशा सा!
आज सजल है अन्तर-लोचन, भाव जगत है कजलाया सा!

छेड़ न मादक राग आज तू, पंचम स्वर में बोल न कोयल!
हिय के इन आले घावों को, कुहुक-कुहुक कर खोल न कोयल!
मानवता शोकाभिभूत है, तुझे कहाँ का गाना सूझा!
इन विषाद की घड़ियों में गा, प्राणों में विष घोल न कोयल!
आज न तेरे बोल सुहाते, आज हृदय है बुझा बुझा सा!
आज सजल है अन्तर लोचन, भाव जगत है कजलाया सा!

दीप बुझ गया, सारा जग है ज्योतिर्धर का पथ निहारता !
वीणा टूट गई, जीवन को व्याकुल जीवन है पुकारता !
हंस उड़ गया, सत्य-अहिंसा के मोती प्रिय कौन चुगे अब ?
सेतु बह गया, जो जन-जन को पार कलह नद से उतारता !
रिक्त हो गया स्नेह पूर्ण-घट, जीवन फिर प्यासे का प्यासा !
आज सजल है अन्तर-लोचन, भाव जगत है कजलाया सा !
आओ राष्ट्र-पिता की स्मृति में, आँसू के दो हार पिरोलें !
उसकी वाणी की गंगा में, अपने सारे कल्मष धोलें !
उसके चरणों की पावन रज, अपनी आँखों का अंजन हो !
इस नैराश्य-जड़ित वेला में, सहज स्नेह के दीप सँजोलें !
तिमिर-पुंज में आशा का
आलोक मुस्करा दे ऊषा सा !
आज सजल है अन्तर-लोचन
भाव-जगत है कजलाया सा !

—श्री प्रभाकर माचवे
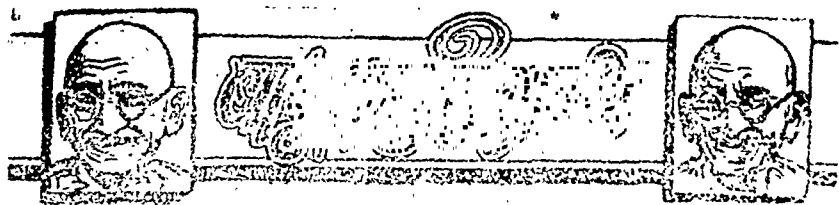
बापू! तुमने मेरे परिणय के अवसर पर
काते थे एक सौ आठ जो तार मधुर—
वे मंगल-सूत्र बचे हैं स्मृति के कुछ अक्षर—
पत्रों के! मुझको याद अहा! वह प्रात प्रहर
जब सेवाग्रामाश्रम में तेरी कुटिया के पीछे ही
मैंने पाई जीवन-संगिनि, अग्नि की साक्ष्य में वह बाला
कण्व की भांति तुमने मृग-शावकिनि सी कन्या को दे डाला था
आठ बरस पहले अब स्मृति ही शेष रही।

तुमको खोकर हमने अपने कुटुम्ब के जीवन में पाया
ऐसा गहरा सा रिक्त एक, ऐसे सूने पन की छाया
हैं शब्द निबल करने उनका पूरा-पूरा सच्चा बयान
………………अभियान तुम्हारा पूरा हो, अंकुरित फलित—
यह रक्त-दान!
वह बलि का बीज जहाँ, मंगल धरती पर पड़ा, वहाँ उगे
उस बोधिसत्व के शीर्ष वृक्ष से भी महानतर एक विटप—
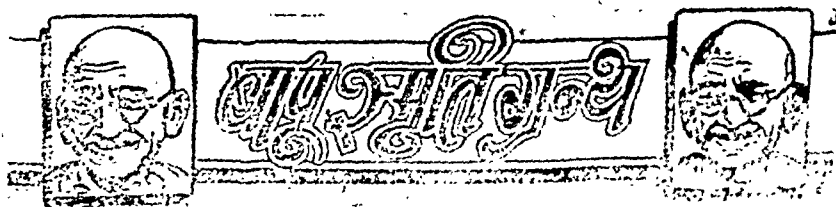
जिसकी छाया में विश्व-शान्ति के सपने सच्चे हों और जगे
मानव-मानव में सोये 'शिव' जो विष प्राशन करलें अनकंप
सुकरात, ख्रिष्ट, लिंकन की इस पंक्ति में नया आभामय रत्न
'जोत से जोत तू जला गया' नेह से भरा यह नव दीपक !
''''''हम आज पुनः दोहराते हैं बापू ! वह परिणय-प्रण पावन
तेरे आदर्शों पर चलने का बल दे पुण्य-स्मरण पावन
मेरे छोटे से जीवन के वे मूल्यवान से क्षण पावन
जब हम दोनों ने छुए प्रणत होकर वे पुण्य-चरण पावन
तुमने भी हँसकर, वत्सल कर पीठ पर हमारे धौल मधुर
जो दिये कभी, वह स्पर्श अमर, वह स्मृति भी है कितनी सुखकर
तुम राष्ट्र पिता थे, फिर भी थे मेरे भी ज्यों आत्मीय स्वजन
वह स्मरण आज रह-रह कर क्यों आँखों में लाता जीवन-कण
वह स्पर्श तुम्हारा संजीवन था, अमृत प्राण ओ युग-द्रष्टा !
तुमने मेरे लघु जीवन में दी नई दृष्टि, अग-जग द्रष्टा !
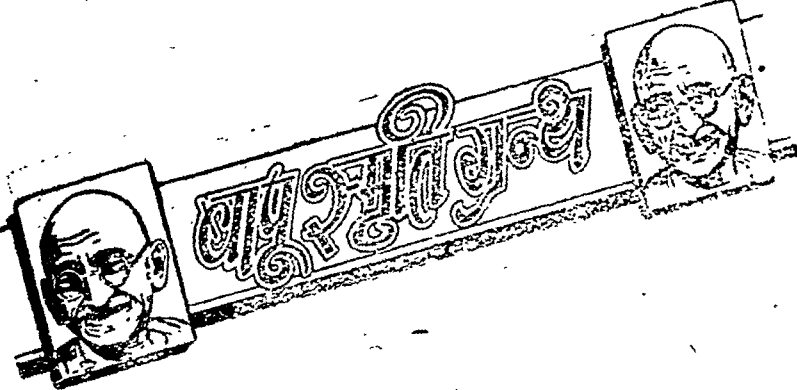
—श्री गोपालशरण सिंह

प्रेम के पावन निकेतन!
था अतुल तुम में तपोबल
प्राप्त कर जिनका अमृत फल,
हो गई भव-भूमि निर्मल
शुचि अहिंसा के व्रती तुम
थे अलौकिक विश्व के! घन
प्रेम के पावन-निकेतन!

प्राप्त कर तुम से अपरिमित
सत्य युग की शक्ति सञ्चित
हो गया है मनुज विकसित
कर दिया तुमने विनिर्मित
विश्व में स्वर्गीय जीवन!
प्रेम के पावन निकेतन!
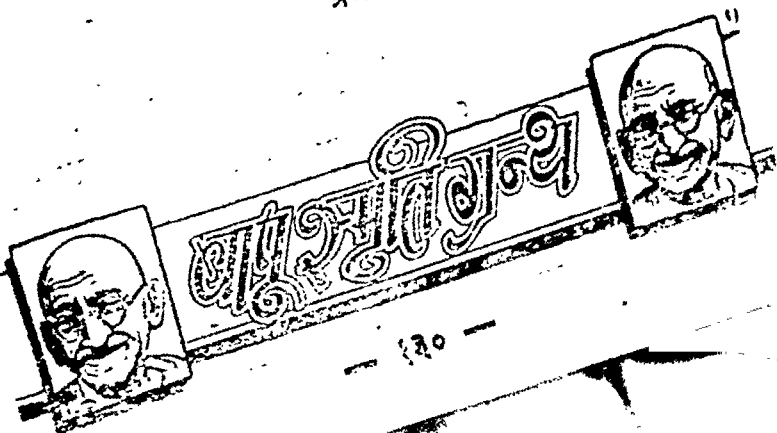
सत्य की ही है हुई जय,
हो गया है हृदय निर्भय,
मिट गया है मोह - संशय,
हो गया स्वाधीन भारत

छिन्न कर बहु जटिल बन्धन!
प्रेम के पावन निकेतन!

था तुम्हारा त्याग अतुलित,
पर न था अनुराग परिमित,
तुम रहे बापू असीमित,
जग सुखी हो इसलिये

तुमने किया निजसुख विसर्जन!
प्रेम के पावन निकेतन!

नाशवान शरीर तजकर,
हो गये हो तुम अनश्वर,
रह गया है रिक्त पञ्जर,
बन गये तुम दिव्य दर्शन

साधु होकर भी अदर्शन!
प्रेम के पावन निकेतन!

—श्री 'अञ्चल'

वेद ऋचायें थीं साँसों में, मुक्ति बसी थी तन में ,
दृष्टि भरी थी वरदानों से, मूर्त्ति विभा थी मन में ।
स्वर्ग विकल होता था बापू की आत्मा के दुख से ।
राम नाम उज्ज्वल होता था, कढ़ उस करुणा मुख से ।

जीवित था विश्वास और संकल्प हृदय-कंपन में ,
बिम्बित होती थी शिवता, मुस्कानों के दर्पण में ।
देह जली पर प्राणों का प्रह्लाद नहीं जल पाया ,
कौन जला पाया हिम-गिरि को, कौन बुझा शशि पाया ?

चुका वक्ष का रक्त—अपरिमित प्रेमसिन्धु जीवन का ,
देता रहा मोल जो युग-युग के अभिशप्त मरण का ।
अधि देवत्व क्षमा का—मानव-ममता की ईश्वरता ।
मूर्त्त हुई थी तापस-तन में, पर-सेवा वत्सलता ।

कौन सुनेगा अब पुकार, पीड़ित जग के जन जन की ?
कौन हरेगा दाह तृषा, चेतनता के कण कण की ?

हाड़ चाम के पुतलों में, बलि की बिजली का चालक है,
त्यागाहुति के शोलों का अरुणाभ-पुन्य का पालक है,
ऐसा था देवर्षि हमारा बापू राष्ट्र-विधाता।
ऐसा था वह अमर ज्योति का-अक्षुण्ण दीप्ति का दाता।

निर्वापित हो गई आरती, राम नाम के जप की;
काँप रहीं हैं नीवें फिर श्रद्धा-निष्ठा की तप की;
वेद शिखायें थीं सांसों में, सत्य-शिखा अन्तर में।
पद-रज में संतत्व बसा था, देव सृष्टि थी स्वर में।

रोम रोम से चैत्य-चाँदनी का चंदन झरता था,
रोता था प्रभु स्वयं कि जब बापू का मन भरता था;
वह सहिष्णुता का देवल, वह शान्ति-स्नेह का सम्बल।
वह तन्मयता का स्वामी, उज्ज्वलता से अति उज्जवल।

थी सदेह अवदात विमलता, उस निष्कामी तन में;
वेद-ऋचायें थीं साँसों में, राम मूर्त था मन में।
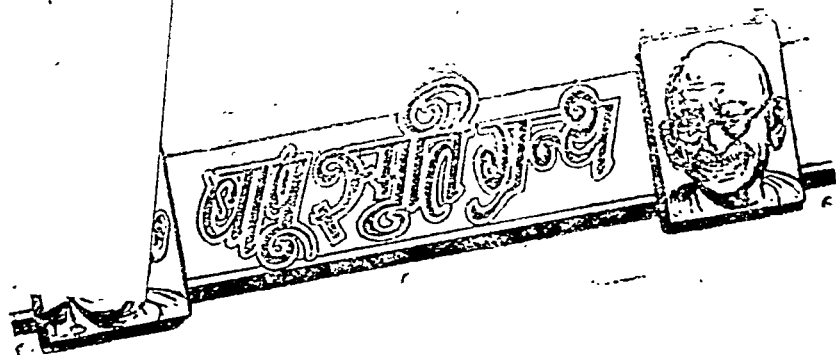
—श्री चिरंजीत—

आज सुहागिन मधु-ऋतु सहसा, बनी अभागिन नारी रे।

रुद्ध आँसुओं से पिक-वाणी, देह-लता है कुम्हलाई;
दग्ध अधर-दल, बिखरे कुन्तल, उर-कलिका है मुरझाई,
प्रथम बार यह विश्व-विजयिनी, क्रूर नियति से हारी रे!
आज सुहागिन मधु-ऋतु सहसा, बनी अभागिन नारी रे!

चन्दन-चर्चित अग्नि-मार्ग से ज्योतिर्धर वह चला गया,
छू न सकी यह वरद चरण वे, हृदय लाज से छला गया,
हरितांचल में राख चिता की, सुलग रही चिनगारी रे!
आज सुहागिन मधु-ऋतु सहसा, बनी अभागिन नारी रे!

धू धू माँग सिंदूर जलाती बुझी चिता के आगे रे!
अश्रु धारमें डूब रहे कजरारे नयन अभागे रे!
किन बिगड़ी घड़ियों में आई, यह प्रियतम की प्यारी रे!
आज सुहागिन मधु-ऋतु सहसा, बनी अभागिन नारी रे!

तीस जनवरी की वह सन्ध्या, दो-दो सूरज अस्त हुए,
अस्ताचल की दृढ़ छाती से अब तक शोणित-धार हुए,
और शाप सी अब तक छाई वह सन्ध्या हत्यारी रे!
आज सुहागिन मधु-ऋतु सहसा, बनी अभागिन नारी रे!

नई नवेली द्वार खड़ी है, कौन करे अगवानी रे!
कैसे इसे सुनायें अपने घर की दुखद कहानी रे!
उसकी क्या, अपनी छाती में हमने गोली मारी रे!
आज सुहागिन मधु-ऋतु सहसा, बनी अभागिन नारी रे!

हरित पल्लवित यौवन वाली अचल सुहागिन बनी रहे!
'मरकर भी वह शाश्वत जीवित', शोकाकुल जग यही कहे,
द्वैत मिटा, मिल एक हुए फिर प्रकृति पुरुष द्युतिधारी रे।
आज अभागिन मधु-ऋतु सहसा, बनी सुहागिन नारी रे!

[आल इण्डिया रेडियो दिल्ली के सौजन्य से]

—श्री हरिश्चन्द्र वर्मा

देश, काल सब खड़े रह गये,
निस्वन ले ठहरा पवमान।
देख दनुजता के हाथों यों
आज मनुजता का बलिदान।

देख रही रंकिन मानवता,
टूट गई उसकी पतवार।
कैसा उल्कापात हुआ यह
समझ न पाता है संसार।

उमड़ रही है सघन वेदना,
उमड़ा तम का पारावार।
गिरि, भू, अम्बर, जड़, चेतन में,
'बापू!' 'बापू!' हाहाकार।

भारत की साँसें सीती हैं,
आज पितामह! तेरे साथ।
जर्जर, पीड़ित, असहायों से,
छूट गया तव करुणा हाथ।

जन-जन की छलकी आँखों में,
रोप तुम्हारी ज्योतित मूर्ति।
तुम में ही पाई थी हमने,
आकुल इच्छाओं की पूर्ति।

भारत के कण-कण में 'बापू'
'बापू' में भारत छवि मान।
देख सका था फिर से यह जग,
गौतम की उज्ज्वल मुस्कान।

तेरे इंगित पर झुकता था,
लौह विश्व, अभिमानी बल।
तुझको छू तूफान बवण्डर,
बन जाते थे मलयानल।

अरे! स्वर्ग के अग्रदूत ओ,
सत्य, अहिंसा के वरदान।
धवल-धर्म की धुरी रहे तुम,
विश्व-वेणु की मादक तान।

आज दीप आँखों से ओझल,
अमर-ज्योति से भरा दिगन्त।
तव युग-वाणी से गूँजेगा,
रह-रह कर आकाश अनन्त।

काल-पृष्ठ पर अमर रहेगा
सदा तुम्हारा युग-इतिहास
भावी संस्कृतियों के सँग-सँग
फूलेगा तव स्वप्न पलाश

यह दधीचि का अस्थि पुञ्ज था,
व्यर्थ न जायेगा बलिदान।
इसके कण-कण, अणु-अणु रज से,
होगा नव-नूतन निर्माण।

आदर्शों पर मरने वाले
तुमको शत-शत बार प्रणाम
बापू! भारत के भगवान!
तुमको शत-शत बार प्रणाम!

[ऑल-इण्डिया-रेडियो दिल्ली के सौजन्य से]

—सुश्री शान्ति सिंहल

है अभी सूरज गगन में, छा रहा फिर क्यों अँधेरा ?

आज प्रिय बापू कहाँ है, राष्ट्र का सम्बल सहारा ;
हो गया क्या अस्त सत्याकाश का ध्रुव ज्योति-तारा ;
तू बता कैसे सहें ओ नियति यह उपहास तेरा।

वेदना से हो चली सन्ध्या अभागी आज काली ;
लाज से लो और गहरी, हो गई है क्षितिज-लाली ;
भूल विहगावलि रही जाने कहाँ, कैसा बसेरा ?

हाय जिसका रक्त पीकर भाग्य भारत का पला था ;
आज यों उस देवता को, दैत्य से जाना छला था ;
मोल कुछ भी आँक पाता विश्व-निधि का वह लुटेरा !

प्रश्न सा सबके हृदय में छा रहा साकार बन कर ;
फिर विकल हैं अश्रु दृग में क्षुब्ध पारावार बन कर ;
छा गई कैसी निशा जिसका अलख सा है सवेरा।

धैर्य धर, उठ देश मेरे ! देख मत इस कालिमा को ;
जाग कर तब शौर्य देखे, मुस्कराती लालिमा को ;
इस निराशा की निशा का शीघ्र ही होगा सवेरा।

—श्री भानुप्रकाश सिंह

हम, हाय ! मौन निरुपाय रहे, सहसा लुट गया हमारा घर ;
यह धरा न क्यों जल मग्न हुई, बापू का निष्ठुर वध सुनकर।

क्या कभी विश्व में इससे भी, भीषण-तर अत्याचार हुआ ?
यह मानवता की छाती पर पशुता का नग्न प्रहार हुआ।
वह शान्ति-अहिंसा के वाहक, हिंसा के मूक शिकार हुए ;
हम दुखित स्तब्ध रह गये और, बापू जग-जलनिधि पार हुए।
बैठा था जिस पर स्वयं हाय ! काटी 'पागल' ने वही डाल ;
अपने ही दीपक से कुटिया में हाय लगी विकराल ज्वाल।
जिस पर था नीड़ बना अपना, वह डाली तरु से टूट गई ;
असहाय देश की नौका की पतवार हाथ से छूट गई।

वह देखो बिलख उठे हरिजन, सुनकर बापू का दुखद निधन ;
मन्दिर-प्रवेश क्या ? उन्हें आज, दूभर हो उठा व्यथित जीवन।
अब क्यों 'भंगी कॉलोनी' से, सुरपुर को स्पर्द्धा होगी ?
महतर कुमारिका अब कैसे, भारत की अध्यक्षा होगी ?
वह-'राम' कहाँ जिसको भारत की 'शिवरी' बेर खिलायेगी ?
अस्पृश्य-जातियाँ किस 'हरि' के आश्रय हरिजन कहलायेंगी ?

अबलों का बल, दुखियों का सुख, त्रसितों का त्राता रूठ गया;
पीड़ितों, शोषितों, दलितों का, वह भाग्य विधाता रूठ गया।

हम वह पागल जिसने अपना गृह आज जलाकर क्षार किया;
वह पूत कि जिसने बापू-से ही वृद्ध पिता पर वार किया।
हम हिंसक पितु-घाती, कैसे, भारत जननी को समझायें?
अपना कलंक-पंकिल-मुख हम, कैसे जगती को दिखलायें?
हे मोहन! हिंसा-विषधर से, भारत को कौन बचायेगा?
हे कर्णधार! जर्जर नौका, यह, कौन पार पहुँचायेगा?
हे भारत के स्वातंत्र्य-जनक! हे अग्रदूत मानवता के!
है कोटि नमन तुमको, हन्ता जगती की इस दानवता के।

दानी दधीचि! तुम अस्थिदान, करके भी रहे अडिग अविचल;
हे नीलकण्ठ! दे सुधादान जग को, तुम खुद पी गये गरल।
पहिचान न अपने धर्मराज को पाये हम धर्मान्ध यहाँ;
नव-युग के पूज्य अजात शत्रु! तुम हमें छोड़कर गये कहाँ?
सहकर अगणित आघात, रहे तुम सदा अडिग, अविचल निर्भय;
हे पुरुषोत्तम! हे युग-स्रष्टा! हे अमर शहीद तुम्हारी जय!
सुकरात, बुद्ध ईसा करते, युग-पुरुष तुम्हारा अभिनन्दन;
क्या याद रहेगा हे बापू, इस पतित पूत का पद-वन्दन?

—श्री निरंकार देव 'सेवक'

बापू मर कर अमर हो गये।

भेद भाव का भूत भगा कर,
सबको अपने गले लगा कर,
मानवता के अन्तर की तुम
सारी कालिख, मैल धो गये।

बापू मर कर अमर हो गये।

'हिन्दू, मुसलमान ईसाई
सब आपस में भाई-भाई'
जन-जन के हृदयाङ्गन में तुम
विमल प्रेम का बीज बो गये।

बापू मर कर अमर हो गये।

प्रेम मूर्ति तुम, चिर अविनाशी
भाग्य-हीन हम भारत वासी,
सदियों में बन्धन टूटे, जब
हम जागे तुम तभी सो गये।

बापू मर कर अमर हो गये।
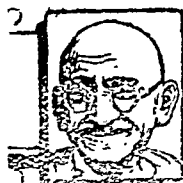
— श्री भगवन्त शरण जौहरी

देवदूत ! सदियों से भारत
था पीड़ित, निष्प्राण ;
फूँक दिया तुमने नव-जीवन
जागा स्वर्ण - विहान।

तुम आये, मानो ईसा ने
लिया पुनः अवतार ;
तुम में गौतम बार-बार
जग ने देखा साकार !

सत्य अहिंसा के शस्त्रों ने
जीत लिया संसार,
घायल मानवता ने पाया
तुमसे प्यार दुलार।

हमें याद है त्याग तपस्या
वे दुष्कर बलिदान;
एक तुम्हारे इंगित पर
मर मिटने का अरमान।

आज़ादी का नन्हा पौधा
रक्त-दान से सींच;
हँसते-हँसते जिन वीरों ने
ली थीं आँखें मींच।

उनका वह उत्सर्ग जगा कर
प्राणों में अभिमान;
जग मग करता रहा और अब
बन आया वरदान!

पश्चिम के डूबे सूरज ने
देखा पूर्व प्रभात;
आखिर बीती ही कल्मष से
ओत-प्रोत वह रात।

किन्तु तुम्हारी ही हत्या से
रंगे हुए हैं हाथ,
आज विश्व भर में लज्जा से
झुका हुआ है माथ।

[ऑल-इण्डिया रेडियो बम्बई के सौजन्य से]

—सुश्री शकुन्तला खरे

तुम गये कि जैसे भूतल से, सज्जनता का अवतार गया ?

ईसा फाँसी पर झूले थे
पैगम्बर भी कुर्बान हुये,
बापू सीने पर गोली खा
प्रभु-द्वारे तुमने प्राण दिये।

तुमने ही तो आज़ादी दी
तुम भारत-भाग्य-विधाता थे;
तुम सत्य अहिंसा के प्रतीक
तुम राष्ट्र-पिता, जग-त्राता थे

तुम जन-मन-गण-अधिनायक थे
मानव की पूजा करते थे;
विष के प्याले पर प्याले पी
विषघट में अमृत भरते थे।

निज प्राण हथेली पर लेकर
नागों से खेला करते थे;
तुम दया, प्यार औ' क्षमा लिये
हिंसा के बीच उतरते थे।

तुम क्रान्ति-शान्ति के साथ साथ
पानी में आग लगाते थे;
दिशि-दिशि में ज्वाला भभका कर
फिर तुम ही उसे बुझाते थे।

तुम सत्य अहिंसा के बल पर
भारत की नैया खेते थे;
तुम सत्य अहिंसा के बल पर
अणु-बम से लोहा लेते थे।

तुम में ऐसा था जाने क्या
जो पल में मुकुट हिला देते;
केवल दो मीठे बोलों से
काँटों में फूल खिला देते।

तुम एक तर्जनी पर अपनी
सारा ब्रह्माण्ड हिलाते थे;
तुम एक तर्जनी पर अपनी
दुनिया के शीष झुकाते थे।

ओ अभय! तुम्हे था भय किसका
तुम राम-रहीम दुलारे थे;
जग सचमुच तुम से धन्य हुआ
तुम सारे जग से न्यारे थे।

तुम कहते थे वह जीवन क्या
जिसमें मानव का प्यार नहीं;
जिसमें पृथ्वी की सहन-शक्ति
औ' अम्बर का विस्तार नहीं।

तुम भीष्म पितामह थे बापू!
गौतम के अवतार तुम्हीं;
म देवदूत थे मनुज नहीं
महावीर साकार तुम्हीं।

तुम गये कि जैसे कोटि कोटि
नयनों का तारा टूट गया;
तुम गये कि जैसे कोटि कोटि
प्राणों का सम्बल छूट गया।

तु गये कि जैसे दुनिया से, सज्जनता का अवतार गया।

—श्री रामदरश मिश्र

रात घनी है बादल छाये
काँप रहे हैं पंथी के पग
अर्द्ध-निशा में जग के जगमग
दीपक का अवसान हुआ क्यों?

राष्ट्र-पिता ! तुमने निज पग से, कितने ही दुर्गम पथ नापे,
ज्योति-चरण से देव तुम्हारे, कितने ही तम के वन काँपे;
कितनी बार बिजलियाँ तड़पीं, शत-शत मृत्यु प्रलय कंपन ले,
पर तुमने चलना ही जाना, मानव को पलकों में ढाँपे।

आँखों में सावन, प्राणों में
पतझर, सुधियों में पुरवाई
खिलने के पहले ही जलकर
राख सजल अरमान हुआ क्यों ?

सूना है आकाश धरा का, सूनी है फूलों की डाली;
सूना है स्मृतियों का खँडहर सूनी सूनी घड़ियाँ काली।
वर्धा के सूने आँगन में, होगी मौन दिवस की छाया;
रोती होगी बाहों में पद-चिह्न पकड़ कर नोआखाली।

मानव की जलती दोपहरी
जिसकी स्वर लहरी में भीगी,
आज मरण के सूने तट पर
क्रन्दन सा वह गान हुआ क्यों ?

काँप रही थी जिसको छूने में थर-थर शासन की सत्ता,
अरे आग में नाप रहा था, जो नोआखाली कलकत्ता;
आस्तीन के एक साँप ने, क्षण भर में ही उसे सुलाया,
आह क्षोभ से काँप रहा है, जग का तृण-तृण, पत्ता-पत्ता।

बकरी मौन जुगाली करती
पूछ रही दृग में आँसू भर
पशु से भी निर्मम नीचा, मनु-
का बेटा इंसान हुआ क्यों ?

यमुना के जिस नीलम तट पर गूँज रहा था वंशी का रव,
आज वहीं जग के मोहन का, भस्म हो गया जल-जल कर शव;
आग लगी है वंशीवट में, सुलग रही कुंजों की छाया,
दुनिया की आँखों के आगे, झुलस गया दुनिया का वैभव।

गोदी में भर श्याम लहरियाँ
रोज़ निशा में रो जायेंगी,
काले काले अभिशापों सा
धरती का वरदान हुआ क्यों ?

जग के प्राणों में गूँजेगी, बापू ! तेरी प्रेम-कहानी,
सुनकर जिसको शिला-खण्ड भी, बहा करेगा बनकर पानी;
हिम गिरि की चोटी से झर-झर निर्झर भरता जायेगा स्वर,
भारत के ये मुक्त विहग, गाएँगे देव ! तुम्हारी वाणी।

पूछेंगे नभ के तारों से
दुनिया वाले आँख उठाकर;
मानवता की ही घाटी में
मानव का बलिदान हुआ क्यों ?

—श्री राम किशोर शर्मा 'किशोर'

विदा-विदा ! गौरव स्वदेश के !
जगती के शृंगार विदा !
सत्य-अहिंसा, विश्वबन्धुता ,
के अनुपम अवतार विदा !

विदा ज्योति के पुंज अमित
आशाओं के संसार विदा !
राष्ट्र-पिता ! इह-जीवन का यह
कैसा उपसंहार विदा !

रोता आज देश का जन-जन ,
'प्रिय बापू का प्यार कहाँ ?'
एक प्रतिध्वनि ही उठती है-
'अब बापू का प्यार कहाँ ?'

—श्री बृजकिशोर शर्मा 'बृजेश'

बापू तुमने प्राण चढ़ाये,
फिर भी देश पड़ा सोता है।
आज हमारे हिन्द-राष्ट्र का
असमय सूर्य अस्त होता है।

अमर शहीद हुये हो तुम तो, फूलों के रथ में जाते हो,
इस अनाथ मृत हिन्द राष्ट्र को, अन्त-समय क्या कह जाते हो?
तुम प्रतीक हो शान्ति-प्रेम के, ईसा बुद्ध कबीर तुम्हीं हो;
चपल-हृदय भाई के हाथों, मरने वाले वीर तुम्हीं हो।

देश बँटा, धन-धाम लुटा पर,
आशा के आधार तुम्हीं थे;
भँवर पड़ी भारत-नौका के
सच्चे खेवन-हार तुम्हीं थे।

शान्ति-प्रेम का मंत्र फूँकने, दुख है! अधिक न रह पाये तुम,
हिन्दू मुस्लिम वधिक जनों को, बापू अधिक न कह पाये तुम।
आज पतन के पथ पर चलकर, देश कलंकित है लज्जित है,
भ्रमित हृदय को क्या अवगत है, किस पथ में भारत का हित है।

—श्री वीरेन्द्र मिश्र
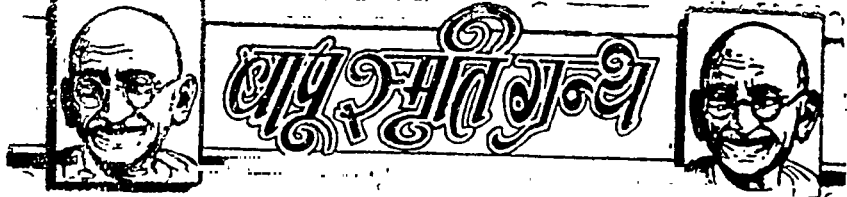
साम्राज्यों के लिये काल-सा, दिखने में कंकाल रहा जो,
जिसका अन्तर कोहनूर था, बाहर से कंगाल रहा जो;
जिसने अपनी दीप-रागिनी, सीमाओं में कभी न बाँधी,
तुम से बिछुड़ गया वह दीपक, तुमसे बिछुड़ गया वह गाँधी;

और विश्व के नयनों में, आँसू बन कर रह गया जवाहर,
जीवन की यह दुसह वेदना, प्राणों पर सह गया जवाहर;
धैर्य धरो इस विश्व-व्यथा में, आशाओं के वन्दन वारो!
कुछ मत देखो केवल उसकी अमर ज्योति की ओर निहारो!

सूना-सूना पवन बह रहा, बदला नीलाम्बर भी अब है,
अब ध्रुव तारा टूट चुकेगा, तब का गगन आज का नभ है;
मुक्त देश की पराधीन होने पर जो हालत होती है,
वैसी ही वीभत्स रागिनी, देखो दिशा-दिशा रोती है;

उधर व्यथा से आकुल सावन का वह मेघ घुमड़ आया है,
जन-समुद्र में हाहाकारों का तूफ़ान उमड़ आया है;
लेकिन इस घन-घोर अँधेरे में भी जगते रहो सितारो!
कुछ मत देखो केवल उसकी, अमर ज्योति की ओर निहारो!

जनहित जिन्दा रहा सदा वह, भागा नहीं कभी भी डर कर,
कैसे होते हैं शहीद, यह उसने बता दिया खुद मरकर;
और बड़ी साधारण गति से, चला गया वह उस कतार में,
ईसा जहाँ गीत है अद्भुत, मौन-गगन वाली सितार में;

तुम साकार बनो उसके आदेशों के पालन, ओ साथी!
उसके सपनों की संस्कृति में, बन जाओ तुम प्राण-प्रभाती!
वह अपना है फिर आयेगा, उदयाचल में पंथ बुहारो!
कुछ मत देखो केवल उसकी, अमर ज्योति की ओर निहारो!

महा पुरुष के महा निधन से, झुलस गई जग की चंचलता,
घास फूस की झोंपड़ियों से, भागी धूल भरी व्याकुलता;
कल तक जिसने पदरज ली थी, उसको मिली राख की ढेरी,
अम्तर-दाह लिये बैठी है, जमुना-तट की निशा घनेरी;

वह जमुना-तट जहाँ अनोखे कृष्ण, अनोखे शाहजहाँ की,
शाश्वत स्मृति है लिये सो रही, पीड़ा चिन्ता यहाँ वहाँ की;
ऐसे आया नहीं, न आयेगा, यों तुम मत व्यर्थ पुकारो!
कुछ मत देखो केवल उसकी, अमर ज्योति की ओर निहारो!

साथी! मंजिल नहीं मिली है, चढ़ना है आगे की सीढ़ी,
यदि तुम यहीं रुक गये तो, थूकेगी आने वाली पीढ़ी;
मधुवन के किञ्जलक तुम्हीं हो, तुम पर गाँधी का जीवन था,
तुम उसके ही पुष्प कि जिसका, माली स्वयं बना मधुवन था;

अपने प्राणों को वह तुममें शीत वर्फ सा गला गया है,
वह इस युग का मृतक नहीं है, युग-युग आगे चला गया है;
वह बलिदान दे गया, अपने आकर्षण उस पर बलिहारो!
उठो उठो तुम आज जरा उस, अमर ज्योति की ओर निहारो!

दिल्ली के उस मरघट में हैं अस्त हुईं अनगिनत हस्तियाँ,
कितनों के अस्तित्व मिट गये, और बस गईं नई बस्तियाँ;
पर अब युग-युग की रुग्णा-सी, त्रस्त राजधानी बैठी है,
कोटि कोटि हाहाकारों को, लिये मूक वाणी बैठी है;

ऐसा शोक न कभी हुआ था, जगती का कण-कण रोता है,
माता के दिल से तो पूछो, पुत्र शोक कैसा होता है;
किन्तु तिरंगा रहो सम्हाले, मुक्त देश के पहरेदारो!
कुछ मत देखो केवल उसकी, अमर ज्योति की ओर निहारो!

मानव मात्र समन्वित हों सब, धर्म कर्म का भेद भुलाकर ;
शक्ति मुक्ति हो जग-जीवन में, जैसे हैं शशि और दिवाकर ;
वह तो जीवन और मरण के, जंजालों से रहा परे था ,
विश्व कर्म में अमर ज्योति का, वह अद्भुत संगीत भरे था ,

पूर्ण करो संतुलित हृदय से, उसके जीवन की अभिलाषा ,
दिशि-हारे से हृदय हो रहे, बढ़ो उन्हें दो आज दिलासा ;
नाश हो चुका बहुत बहारो ! उठो मधुर आलोक सँवारो !
कुछ मत देखो केवल उसकी, अमर ज्योति की ओर निहारो ।

—श्री घासीराम जैन 'चन्द्र'

विश्व प्रकम्पित हुआ आज
प्रलयंकर ने आँखें खोलीं
हाय ! देश के राष्ट्र-पिता पर
बरस पड़ीं कैसे गोलीं ?

हिलकी भर रो पड़ा हिमालय, गंगा अरु जमुना रोई;
अखिल विश्व की सुखद शान्ति, हा हा अनन्त में जा सोई ॥

रोये दीन दरिद्र, दुक्ख—
परिपूरित हो भारत वासी,
रोये दलित अछूत कि जिनके
लिये बने तुम सन्यासी ;

निर्धन के धन, निर्जन के जन, भारत-भाग्य-विधाता थे ।
अशरण-शरण, पूज्य बापू तुम, स्वतंत्रता के दाता थे ॥

सुन सुन छाती फटी दुक्ख से
व्याकुल दहलाई दिल्ली ;
आँसू बह बह चले शोक से
आकुल कहलाई दिल्ली ।
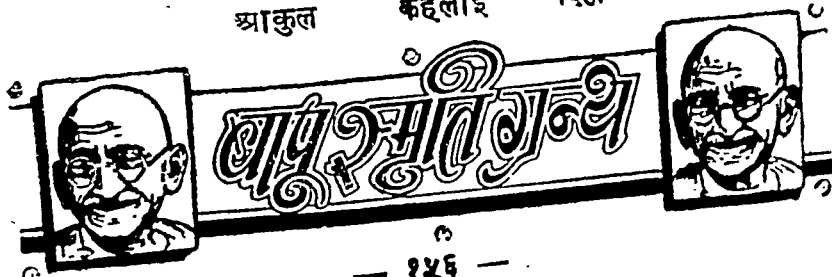
देश-देश ने व्याकुल हो
बापू को दीं श्रद्धाञ्जलियाँ।
हुये शोक संतप्त सभी जन
नगर-नगर गलियाँ-गलियाँ;
अपने ही हाथों से हमने विष की प्रबल बेल बोई।
हाय! राष्ट्र की अजर अमर निधि, अपने हाथों से खोई॥

मुख पर यह कालोंच लग गई
अरे धर्म के मतवालो!
देश-द्रोहियो! मातृ भूमि को
अब बन्धन में मत डालो!
देख हृदय पाषाण पिघलता, सौम्य मूर्त्ति जिनकी भाला;
उन पर कैसे चला सका तू, निर्दय, निठुर बता गोली?

अमर रहेगी याद तुम्हारी
विश्व-वंद्य बापू गान्धी
अटल रहेगा ध्येय तुम्हारा
चला करे कैसी आँधी
शोक भरे नयनों में आँसू, कर में फूलों की कलियाँ!
सादर चरणों में अर्पित हैं, हे बापू! श्रद्धाञ्जलियाँ॥

—श्री श्रीहरि

फूल झड़े कलियाँ मुरझायीं
पड़ी लतायें बेसुध होकर,
स्तब्ध खड़े हैं वृक्ष लुटे से
मानो अपना सब कुछ खोकर,

शूल नयन-नत, मौन, नमितशिर, खोये जाने किस चिन्तन में,
आज पवन भी भूल गया है क्रीड़ायें करना उपवन में,
कण्ठ हो गया रुद्ध पिकी का सहसा, पंचम तान न निकली,
ओह ! बताओ क्यों अधरों पर ला पाई मुस्कान न तितली ?

आज न जाने मधुप कहाँ हैं
उपवन ही वीरान हुआ है,
किस अनुपम निधि को खोकर यह
सारा जग सुनसान हुआ है ?

तट की चट्टानों से सहसा सागर पड़ जाता टकराकर,
तेजमयी किरणें भी हतप्रभ-मूर्छितसी हैं आज धरा पर।
है अवाक आकाश, दिशायें सभी दीखतीं उन्मन-उन्मन,
जाने कब से सिसक रहा नगराज, अभी तक तर हैं लोचन।

भोले कवि ! क्या ज्ञात न तुझको
मृणमय हिन्दुस्तान हो गया,
चीख उठी है धरती सहसा
मानवता का प्राण खो गया।

दया, क्षमा, ममता, सहिष्णुता, हा ! ममता का गान उठ गया,
मानव नहीं उठा धरती से, मानव का भगवान उठ गया।
वज्रपात ! हा, स्वयं पुत्र ने, आज पिता को गोली मारी,
अरी नियति तू जीती तुझसे, कोटि कोटि की क्षमता हारी।

निखिल विश्व-निधि निगल गया है,
ओह, एक ही अत्याचारी।
अरे हिन्द ! क्या कभी सही थी
तुमने ऐसी विपदा भारी ?

अरी अयोध्या आज खो गई, सरयू प्यारा राम तुम्हारा,
ओह द्वारका ! व्याध-बाण से विद्ध कृष्ण परलोक सिधारा।
फिर से आज गया लटकाया, शूली पर ईसा मसीह को,
अरे ! वध डाला वन किसने क्रूर काल गौतम निरीह को ?

हा सुकरात ! तुम्हारे अपनों
ने ही तुम को जहर दिया है।
हा बापू ! हम महा अधम हैं
हमने तेरा प्राण लिया है।

अपने हाथों अपनी क़िस्मत में है हमने आग लगायी,
यह कुकृत्य है, जिसे देखकर, महा मूर्खता भी शर्मायी।
बापू ! अन्धकार छायेगा, अमर प्रकाश न ले जाओ तुम !
बापू ! हृदय टूट जायेगा, उसकी आश न ले जाओ तुम !

हम प्यासे ही हैं करुणा का
पारावार न ले जाओ तुम।
निराधार हम हो जायेंगे,
यह आधार न ले जाओ तुम।

ओ यमराज ! देह लौटा दो, सत्य-अहिंसा की जो थाती,
बापू की वह देह कि जिस पर स्वयं तपस्या थी बलि जाती।
लौटा दो वह शीश कि जिसने, नहीं कभी झुकना जाना था;
लौटा दो मस्तिष्क कि जिसका, दुनिया ने लोहा माना था।

लौटा दो वे हाथ कि जिन से
अभय-दान हमने पाया था,
लौटा दो वे चरण कि जिन पर
सकल विश्व ही झुक आया था।

लौटा दो वे चरण, कि जिनके सेवन से स्वाधीन हुये हम,
आज विश्व के यश-गौरव के आसन पर आसीन हुये हम।
हे यम! तुमको प्राण चाहिये, शत-शत प्राण उठाते जाओ!
किन्तु देश के बापू का तुम, एक प्राण लौटाते जाओ।

ओ निर्मम पाषाण! दया तो
हम पर तनिक दिखाते जाओ!
बापू के बच्चे रोते हैं,
बापू को लौटाते जाओ!

ओ माँ! बिलख न तू, निज अशरण-शरण ढूँढ़ने हम जाते हैं,
ओ माँ! बिलख न तू, बापू के चरण ढूँढ़ने हम जाते हैं।
रूठ गये हैं बापू हम से, उन्हें मनाने हम जाते हैं,
एक बार फिर श्री चरणों पर शीश झुकाने हम जाते हैं।

हृदय ! करो विश्वास, पिता को
अब न कभी लौटा पायेंगे,
लगा रहेगा माथे पर यह
हम न कलंक मिटा पायेंगे।

फिर भी सदा सदय हो बापू ! हम पर क्रूर हो न पाओगे,
जग से दूर गये पर अपने, उर से दूर न हो पाओगे।
हे इस जीवन के धन ! सब दिन, इस जीवन में लहराओगे,
कहीं छिपो जाकर हे बापू! आखिर लौट यहीं आओगे।

—श्री जगमोहनाथ अवस्थी 'मोहन'

असमय वज्र-प्रहार हो गया
दिन में तारा टूटा।
युग शंकर ने घूँट हलाहल
हँसते-हँसते घूँटा।

जग का एक सहारा जो थी
क्षीण लकुटिया टूटी;
आँखों के आगे ही थाती;
हाय राष्ट की लूटी।

युग की छाती फटी और दुख
की अँधियारी छाई;
स्वयं खो गया महापुरुष
ऐसी 'उजियारी' आई

हुआ काल-अभिनन्दन बापू-
का वह सन्ध्या वन्दन;
तीस जनवरी अन्त शून्य में
आई जग का क्रन्दन।

विश्व-शक्तियाँ नचीं इशारे-
पर जिसकी भृकुटी के,
टिका राष्ट्र-गोवर्द्धन बलपर
था जिसकी लकुटी के।

धरती के उस मानव ने
बढ़ कर घातक को भेंटा;
सत्य अहिंसा की बाहों में
वज्र-प्रहार समेटा।

अपने अर्जुन से न बूँद भर
माँगा तुमने पानी
स्वयं रक्त की गंगा तुमने
यहाँ बहादी दानी!

भारत-भीष्म पितामह की
शर-शय्या अब तो छूटी,
शोणित की गंगा की धारा
वक्षस्थल से फूटी।

पल भर में बन गये हाय तुम
जग को एक पहेली;
तौल रही थी विश्व-शक्ति
केवल तव शक्ति अकेली।

अभी देश की आजादी की
हुई न पूर्ण कहानी;
पूर्णाहुति दे चले, तुम्हारी
पूर्ण हुई कुरबानी।

कल बम फेंका गया किन्तु तुम
अटल रहे हे बापू!
आज गोलियाँ छाती पर खा
अचल रहे हे बापू।

बूँद रक्त के गिरे जहाँ वह
काबा, मक्का, काशी;
मिट्टी तो मिट्टी है लेकिन
बापू तुम अविनाशी।

पथ-दर्शक सिद्धान्त तुम्हारे
प्रहरी होंगे युग के;
अमर रहोगे सदा देवता
बन, क्षण-भंगुर जग के,

श्रद्धाँजलियाँ आज स्वर्ग से
बापू पूज्य हमारे;
आत्म शक्ति दो विधे! जहाँ
हों बापू अमर हमारे।
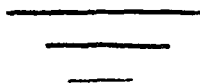
— श्री शिशुपालसिंह 'शिशु'

बापू ! तुम बिन भारत अपना, निशि-दिन शीश धुनेगा।

ना समझी से समझ न पाया
है युग, धर्म तुम्हारा;
ना समझी से समझ न पाया
है शुभ कर्म तुम्हारा।

केवल क्षुद्र क्षितिज का घेरा, रहा दृष्टि को घेरे;
समझ न पाया दूर दर्शिता का मृदु मर्म तुम्हारा।

शीतल छत्र छोड़कर भागा
प्रायः मरुथल को ही,
अब तापित हो वही तुम्हारा
शान्त-स्वभाव गुनेगा

फूँक-फूँक कर धरने वाले, पग का अर्थ न जाना,
सम्हल-सम्हल कर रखने वाले डग का अर्थ न जाना।

पग डन्डी में राजमार्ग की
सार्वभौम गतियों से;
धीरे-धीरे घटने वाले
मग का अर्थ न जाना।

अब शतरंजों की चालों में
अनगिन रोड़े पाकर ;
याद तुम्हारी कर कङ्कड़ियाँ
करुणा भरी चुनेगा ।

तुम तटस्थ थे पर बेड़े को ठीक पता देते थे ।
लहरों, भँवरों, तूफ़ानों की, रोक बता देते थे ।

यद्यपि थे तुम पद्म-पत्र सम
हिन्द-महासागर में ;
किन्तु करोड़ों की नौका
दो हाथों से खेते थे ।

अब इन कानों शब्द तुम्हारे, देश न सुन पायेगा ;
अन्तर्मुख होकर ही केवल शुभ आदेश सुनेगा ।
बापू ! तुम बिन भारत अपना निशि-दिन शीश धुनेगा ।

—श्री 'विराज'

आह ! विश्व के अनुपम योधा
धन्य ब्रिटिश शासन के जेता,
आज शोक से व्याकुल भारत
रो-रो फूट सिसकियाँ लेता।

घोर दुःख से स्तब्ध मूक हो, बिलख रही चिन्तित शंकित हो,
तुम जिस दीन प्रजा के साथी, तुम जिस दीन प्रजा के नेता।
अमिट रहेगी युग-युगान्त तक, वीर ! तुम्हारी अमर कहानी,
तुम थे जन्म जात विद्रोही, तुम थे जन्म-जात सेनानी।

जो तुम कर न सके जीते जी
वह कर जाओगे जीवन दे,
व्यर्थ नहीं जा सकती इतनी
बड़ी तुम्हारी यह कुर्बानी।

तुम सन्तों में सन्त, ज्ञानियों में तुम सबसे बढ़कर ज्ञानी,
तुम वीरों में वीर श्रेष्ठ, बलि पथ के तुम पक्के अभिमानी।
तुम परिपूर्ण अहिंसक, जग की भीषण हिंसा और घृणा की-
आग बुझाकर निज लोहू से, तुमने छोड़ी अमर कहानी।

कालिन्दी के तीर भस्म में
आज मिल गई देह तुम्हारी,
लपटें लाल चिता की लखकर
बिलख उठे लाखों नर नारी।

उनके होठों पर की आहें, उनके नयन युगल का पानी,
कहते हैं छिप गई चीज़ कुछ, अपने प्राणों से भी प्यारी।
उत्तर में गिरिराज हिमालय, खड़ा हुआ ऊँचा कर माथा,
हिन्द महासागर दक्षिण में, सीमाहीन अतल लहराता।

दो थे बस उपमान तुम्हारे
औ' वियोग में व्याकुल होकर,
हिमगिरि है हतवाक, महासागर—
भीषण तूफान मचाता।

जब जब आयेगी अम्बर में, घनी अमावस की अँधियारी,
तम भर जायेगा जग भर में, होगी निष्फल दृष्टि हमारी।
दीख पड़ेगी घने अँधेरे में प्रेतों की काली छाया,
सुन पायेंगे 'राम नाम' सी तब हम सब पद-चाप तुम्हारी।

चले गये तुम स्वर्ग, वहाँ
सुकरात मिलेगा करुणा शाली,
और मिलेगा ईसा जिसके
मुख पर क्षमा दया की लाली।

और मिलेगा लिङ्कन, मानवता का एक पुजारी सच्चा,
बहुत समय से करती आई है दुनिया करतूतें काली।
रही सदा ही जग से बिलकुल, न्यारी अब तक रीति तुम्हारी
सच पूछो तो एक सफलता यह भी आशातीत तुम्हारी।

हैं कितने ही लोग खाट पर
पड़े पड़े दुनिया से जाते,
किन्तु विरोधी के कर से
मरने में ही है जीत तुम्हारी।
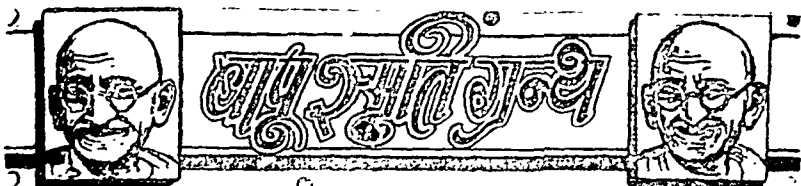
—श्री राजेन्द्र यादव

बापू! तुम बस प्यार रह गये।

धूल बन गये तभी सृष्टि के व्यापक अंश बने हो,
जीवन के आकाश कि जीवन के सब ओर तने हो।
अरे करुण! तेरा यह आसन पलकें और पुतलियाँ,
मृत्युञ्जय! तुम जहाँ, ज्योति से जग मग प्यार सने हो।
रग-रग में हो व्याप्त अतनु तुम,
श्वासों के संचार रह गये।
बापू! तुम बस प्यार रह गये।

सदा तुम्हारे पुष्प बहेंगे, नयनों की धारों में,
यह चिर-संगम व्याप्त हो गया, स्वप्निल संसारों में।
अन्तस्तल की कोमलता में, कसकेंगे युग-युग तक,
दानवता-निशि के तमिस्र पर शान्ति हास तारों में।
भारत के इतिहास-वक्ष पर,
वह ज्वलंत अंगार रह गये।
बापू तुम बस प्यार रह गये।
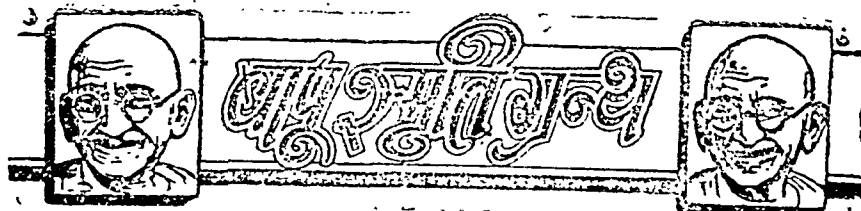
—सुश्री सुशीला शर्मा

बापू ! मानवता के प्रतीक
तुम से थी मानवता पुनीत।
तुम थे सपूत अवनी भर के,
तुम से था—
मानस-लोक दीप्त।

इस युग के कृष्ण तुम्ही सच थे
यह युग था तुम से ज्योतिसंत।
पर दानवता के हाथों से,
हा ! मानवता—
का हुआ अन्त।

तुम सत्य अहिंसा के पालक
एकता तुम्हारी थी अभूत।
धिक आज हमें है, हे बापू !
हम हैं—
मानवता के कपूत।

—श्री 'भँवरश'

का कही दयू का कोपु भवा,
का कही कि यह दहवी होइगै।
अपने हाथन ते अपनेन ऊपर
जब यह अजगइथी होइगै।

वह हाय ! अहिंसा क्यार पुजारी हिंसा ते संहारा गा,
दुनिया का एकु करै वाला, फिरकाबन्दी मां डारा गा।
जो खूनु पराए न देखि सका, वहि क्यार खूनु कइ डारा गा;
दुनिया का चला बसावै जो, दुनिया ते वहै उजारा गा।

तुम्हरे मारे का मरे औरु उनका तो नाँव अमर होइगा,
सेगाँव छूटिगा; नौ का भा, सुरपुर उन क्यार गाँव होइगा।
है कौन कि च्वाट न लागि होय, चोटी बिन चोटी वाले का;
जग के सर्वमनहरन का खलिगा, उठि जावु लँगोटी वाले का।

सब के अधार होइगे बापू!
भूखे का, रोटी वाले का।
का सूट बूट पइजामा वाले,
साधु लँगोटी वाले का।

सुश्री इन्दिरा गुप्ता—

देख रही हूँ मैं दीवारें
बिड़ला ग्रह की
सूनी-सूनी, रोती-रोती
और उन्हीं पर
चंद सितारे
शून्य दृगों से अश्रु बहाते
सिसक चले हैं
महा शून्य में छिप जाने को
अश्रु डुबाने।

पिंजर खाली
उर की डाली
कहाँ आज है मुक्त विहंगम
बापू प्यारा
मधुर सितारा हाय! लीन है
विश्व दीन है
और रिक्त है हृदय धरा का।
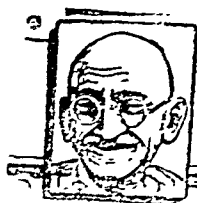
पंछी ! जागो ! गीत तुम्हारे

अमर गान से सत्य सन्देशे

अजर अमर हैं

नश्वर स्वर हैं

और पथिक पाथेय बनेंगे

पूरब लाली; काली काली—

यमुना तीरे सिसक समीरण

हाय ! निधन पर अश्रु बहाता ।

बोलो तो बापू !

बस केवल

एक बार ही

हिन्द तुम्हारा भारत प्यारा

आज व्यथा में डूब रहा है—

और तुम्हारा दिव्य जवाहर—

ज्योति पुञ्ज सा ;

हाय मलिन है .... खिन्न क्षीन है ।

—श्री लक्ष्मी शंकर मिश्र 'निशंक'

युग की पत्थर की सी छाती
टूक टूक होती जाती है,
हिमगिर की उच्चता सहम कर
आज हृदय में सकुचाती है।

आज पंचनद का पानी भी उतर गया, वह बाढ़ नहीं है,
दानवता से पीड़ित मानवता हो आर्त्त पुकार रही है।
त्याग अहिंसा के बल पर जो नित प्रति अंगारों से खेला,
ममता-स्नेह-प्रतीक विश्व में, वन्दनीय है वही अकेला।

आजादी के पथ के जिसने
एक एक कर काँटे बीने,
प्राणों से खिलवाड़ किया है
जीवन में जिस वीर व्रती ने

सुख की नींद छोड़कर जिसने, दुखियों के दुख को दुलराया,
कभी न आने पाया जिसके मन में, अपना और पराया।
अपने बन्धन तोड़ चला जो, अखिल विश्व को मुक्त बनाने,
सदियों से शासित मानव में, सोया स्वाभिमान उकसाने।
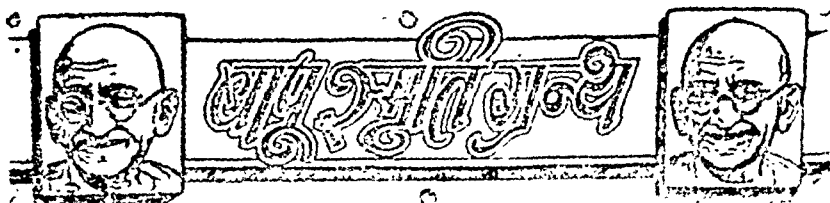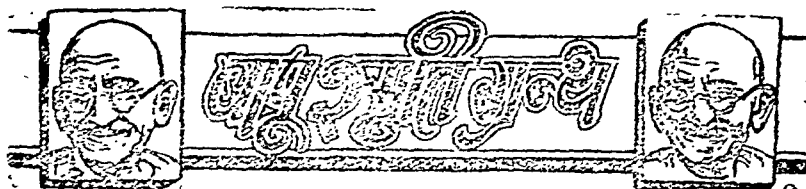
जिसकी नस-नस में जननी का
अनुपम प्यार दुलार भरा है;
जिसकी आँखों में दलितों के
दुख का पारावार भरा है।

उसी वृद्ध बापू के उर में, छाई है क्यों घोर उदासी?
हाय! मृत्यु से आलिंगन करने को विकल हुआ सन्यासी।
आज सिन्धु अपनी मर्यादा, यदि छोड़े तो विस्मय क्या है?
अविचल आत्म शक्ति के आगे, जरा मरण का भी भय क्या है?

मानवता के स्नेह बिना ही
जलती कब से जीवन-बाती,
उस पर धूम मचाये रहता
चारों ओर पवन उत्पाती।

बापू की यह मर्म-वेदना, क्या न राष्ट्र-नभ पर छायेगी?
क्या प्रतिशोध-भावना-ज्वाला, शान्त न कुछ भी हो पायेगी?
जिसने अपना जीवन ही, जन-सेवा में बलिदान किया है!
नीलकण्ठ सा हँस-हँस जिसने, अवसर पर विषपान किया है।

सत्य-अहिंसा द्वारा जिसने
कलुष दासता का खोया है,
हिंसा में रत देख देश को
जिसका रोम-रोम रोया है।

ओ बेसुध गुमराहो ! अब भी चेतो, निश्चित पथ पर आओ।
राष्ट्र-पिता की अन्तिम आज्ञा, अन्तिम आशा मत ठुकराओ!
व्यर्थ न जाने पाये इसमें, छिपी भावना कल्याणी है,
शान्ति-दूत-आदेश दिव्य यह, युग निर्माता की वाणी है।
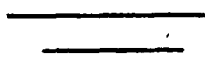
श्री विष्णुदत्त शर्मा 'विकल'

बुझ गया दीप, बुझ गई ज्योति,
पर ज्योतित कर संसार गया।

जीवन भर उर में नेह ढाल
वह सजग रहा प्रतिपल जल-जल,
जिसका प्रकाश युग-युग अविचल-
जिसका प्रकाश नव-नव उज्ज्वल।
ले गया विषमता साथ-साथ,
कर समता का संचार गया।
बुझ गया दीप बुझ गई ज्योति,
पर ज्योतित कर संसार गया।

इस तमाच्छन्न भूमण्डल में
भर गया अलौकिक दिव्यहास,
पद-दलितों का कर दूर त्रास
विद्वेष-भीति का कर विनाश,
मानवता जिला गया, दानवता-
का हो आप शिकार गया।

बुझ गया दीप बुझ गई ज्योति,
पर ज्योतित कर संसार गया।

मिट गया दीप, हो गया अमर
हो गये खेल सारे समाप्त,
खिंचकर विषाद की रेखायें
अणु-अणु तक में होगईं व्याप्त,
ले गया आप सन्ताप, हमें
दे संचित उर का प्यार गया।

बुझ गया दीप बुझ गई ज्योति,
पर ज्योतित कर संसार गया।

सुर-असुरों में संघर्ष हुआ
संसृति-सागर का किया मथन,
स्वातन्त्र्य-सुधा के साथ-साथ
जो कालकूट निकला भीषण;
पी गया स्वयं वह कालकूट—
दे हमें सुधा का सार गया।

बुझ गया दीप बुझ गई ज्योति,
पर ज्योतित कर संसार गया।

सुश्री उर्मिला गुप्ता 'व्यथिता'

मानवता की अलख जगाने वाला अविचल अटल पुजारी।
दिव्यांचल में विश्व-प्रेम भर, बाँट-गया वह कहाँ भिखारी ?
राम-रहीम एक हैं दोनों
जिसने यह गुरु-मन्त्र सिखाया
छुआछूत का तिमिर हटाकर
जिसने नव-प्रभात विहँसाया
शान्ति-सुधा का दान हमें दे, वह अशान्ति पीगया हमारी।
मानवता की अलख जगाने वाला अविचल अटल पुजारी॥

किधर गया ? माँ वसुन्धरा के, बन्धन-मुक्त कराने वाला :
कहाँ छिपा वह सत्य अहिंसा का जादू दिखलाने वाला ?
जल-थल नभ अवसाद पूर्ण हैं
हैं अनुतप्त सभी नर-नारी
मानवता की अलख जगाने-
वाला अविचल अटल पुजारी।
कौन ? रत्न को लूटा जिसने, माँ की गोदी सूनी कर दी
भारत की इस पुण्य धरा में, किसने कलुष-कालिमा भरदी ?

आज प्रकृति अनुतप्त लुटी सी, उर में भर दुख की चिनगारी।
मानवता की अलख जगाने वाला अविचल अटल पुजारी॥

पाया जो वरदान शान्ति का
बस अब यही साधना होगी,
पूर्ण करेंगे कार्य वही जो
बता गया हमको वह योगी।

जो 'युग-स्रष्टा, युग द्रष्टा' था, त्याग तपस्या का अवतारी।
मानवता की अलख जगाने वाला अविचल अटल पुजारी॥

श्री जगदम्बा प्रसाद सक्सेना 'मयङ्क'—

जिसका शुभ्रालोक जगत के, कण-कण में है छाया,
जिसने सोता हुआ हाय ! यह भारत देश जगाया।
स्वाधिकार के लिये शान्ति से, बढ़ना हमें सिखाया,
जिसने समझा नहीं जगत में, अपना और पराया।
त्याग, अहिंसा, सत्य, क्षमा, तप-तेज विनिर्मित काया--
है दुर्भाग्य, देश के सिर पर, नहीं रही वह छाया।
आज स्वकर से अपना ही घर, बना हाय शमशान।
असमय में हो गया हमारा, शुभ्र-दीप-निर्वाण ॥

युग-संचालक, युगाधार हे ! नव-युग के निर्माता !
सम्प्रति राजनीति भारत के, तुम ही भाग्य-विधाता।
क्रूर कुलिश साम्राज्य-शिला से, तुम ही थे जन-त्राता,
पाकर तुम्हें, विश्व निज मन में फूला नहीं समाता।
सेनानी स्वातंत्र्य-समर के, भारत के वर-दाता,
अन्तिम क्षण तक पूर्ण निभाया, राष्ट्र-पिता का नाता।
आज बिना बापू, अनाथ हा ! कोटि-कोटि सन्तान,
असमय में हो गया हमारा, शुभ्र-दीप-निर्वाण ॥

सम्प्रदाय के गरल-पान को, नीलकण्ठ-युगशङ्कर,
हिन्दू-मुस्लिम-ऐक्य, तुम्हारा लक्ष्य रहा जीवन भर।
कटुता पारस्परिक दूर कर, प्रेम-पाठ सिखलाया,
राम-रहीम अभिन्न, सदा यह शुभ-सन्देश सुनाया।
पंकिल-पथ परित्याग, शान्तिमय पथ-प्रशस्त दिखलाया,
जो जन-जीवन में जाग्रति का, नवोन्मेष भर लाया।
भटक रहे हैं आज तुम्हें खो, शत-शत पागल
असमय में हो गया हमारा, शुभ्र-दीप-

पार्थिव-तन से बापू जग में, यद्यपि नहीं रहे हैं,
किन्तु अमर-सन्देश उन्हीं के, घर-घर गूँज रहे हैं।
आत्मा शाश्वत, किन्तु मृत्यु है केवल पट-परिवर्तन,
जीर्ण शीर्ण सी देह छोड़, बापू हो गये चिरन्तन।
एक अहिंसा-मूर्ति मिटा, हिंसक ने है क्या पाया?
समझ लिया होगा मन में यह, गाँधीवाद मिटाया!
अब घर-घर गाँधी पैदा, कर देगा यह
असमय में हो गया हमारा, शुभ्र-दीप-

तूफानों, झंझा के झोंकों में हिमगिरि सा निश्चल,
वह निर्भीक, निमग्न साधना-रत पल-पल पर अविचल।
वह प्रकाश-स्तम्भ सुरक्षक, दुर्गम चट्टानों से,
मार्ग-निदर्शक कठिन काल के भीषण व्यवधानों से।
मनुष्यत्व का तत्व मनोहर, सिखलाने आया था,
इस कलियुग में रामराज्य वह, फिर लाने आया था।
किन्तु न अनुपम रत्न रख सके, हम अविज्ञ अज्ञान।
असमय में हो गया हमारा, शुभ्र-दीप-निर्वाण॥

शोक-मग्न है अखिल विश्व, बापू के दुखद-निधन पर,
हुआ तुषारापात हमारे मानस के मधुवन पर।
अश्रु-सिक्त हैं नयन, हृदय श्रद्धाञ्जलि हित, अति विह्वल,
मन का कलुष मिटायें उन पावन पद-चिह्नों पर चल
मिले शान्ति जिस भाँति दिवंगत आत्मा को जैसे भी
वही कार्य करना हम सबको हो चाहे कैसे भी
अकथ, अनिर्वचनीय, अलौकिक बापू के गुण-गान।
असमय में हो गया हमारा शुभ्र-दीप-निर्वाण॥

श्री नवाब साहब रामपुर —

अँखियाँ खोलो, मुख सों बोलो,
देश की राखो लाज।
आये हैं श्रद्धाँजलियाँ हम,
गान्धी जी महाराज!
नैनन नीर बहाता छोड़ा,
भक्तों से काहे मुख मोड़ा?
देवें दुहाई भारत वासी,
बापू जागो आज!

दोनों जग में तुम्हरी जय हो,
गोली खाके अमर भये हो।
हम से बिछुड़ के स्वर्ग गये हो,
मुगत का पहने ताज।
जिसने बेड़ा देश का तारा,
भव-सागर से पार उतारा—
उसको किस निर्दय ने मारा?
बता दो हे यमराज!

इस धरती की रीति है न्यारी,
उसको मेटें हिंसाकारी,
तन-मन-धन तज के जो चाहे—
सदा अहिंसा राज।
हिन्दू मुस्लिम अब बलिहारें,
मन तुम्हरे उपदेश पै वारें।
मिल जुल सब जय हिन्द पुकारें,
बाजे प्रेमी बाज।

हार कहाँ, वह सत्य विजय है,
घर-घर देखो तुम्हरी जय है।
पहले तो तुम देश गुरू थे,
जगत गुरू भये आज।
रजा पिया को सोच यही है,
तुम्हरे बिन संकोच यही है—
इस जीवन में देख न पाये,
फूला फला स्वराज।

—श्री लखनप्रताप सिंह 'उरगेश'

जागा रे! जग में रुदन-गान।
काँपी पृथ्वी, डोला मानव,
थर्राया सारा आसमान।
जागा रे! जग में रुदन-गान।

हम हृदय न अपना थाम सके,
जब राजघाट की रुकी गली।
आँखों में आँसू रुक न सके
धू-धू करती जब चिता जली।
जब तीर्थराज में रथ आया—
थी मनुज-त्रिवेणी उमड़ चली
श्रद्धा से सब के शीश झुके,
घिर आई आहों की बदली—
जब चला त्रिवेणी संगम पर
अस्थियाँ समेटे वरुण-यान।
जागा रे! जग में रुदन-गान।

—श्री कृष्णकुमार द्विवेदी

दूर देश के वासी बापू! तोड़ा कैसे नेह हमारा ?

आज तुम्हारे वरद-हस्त की, उठी हाय वह शीतल छाया,
हाय! मिट गई आज तुम्हारे जर्जर काया की वह माया।
हाय, तुम्हारे उपकारों का, प्रत्युपकार न हम दे पाये,
हाय, अभागे भारत के सौभाग्य, न तुम जीवित रह पाये।
सोच रहे हैं यही कि हा! हिंसक ने तुमको कैसे मारा
दूर देश के वासी बापू!
तोड़ा कैसे नेह हमारा ?

ऐसी भीषण वेला में, रह सका न शेष तुम्हारा जीवन,
मानवता के प्राङ्गण में जब, दानवता करती थी नर्त्तन।
राष्ट्र-पिता! उस अमर-लोक से, भी करना तुम मार्ग प्रदर्शन,
हम अन्तर में किया करेंगे, सदा तुम्हारे पावन दर्शन।
तुम्हें स्वप्न में भी न भुला पायेगा, यह कृतज्ञ जग सारा।
दूर देश के वासी बापू!
तोड़ा कैसे नेह हमारा ?

—श्री द्वारकाप्रसाद 'विजय'

हो सकता है क्या इससे भी, बढ़कर दुख-संवाद ?
राष्ट्र-पिता के घातक हम ही, यह कैसा अपराध ?
यह कृतघ्नता, यह नासमझी, यह जघन्य सा कर्म !
हाय विधाता ! सह पायेंगे—
हम कैसे यह शर्म ?

सत्य-प्रेम की मूर्ति, अहिंसा के सच्चे अवतार,
कौन मूर्खता-वश हम समझे, उनका जीवन भार।
जिसने उन्हें मिटाना चाहा, मिटा स्वयं वह आप;
जिसने उन्हें बुझाना चाहा—
बुझा स्वयं वह आप।

अरे ! शहीदों को देती है, मौत कभी क्या कष्ट ?
वे तो मर कर ही होते हैं अमर और उत्कृष्ट।
जीवन की अन्तिम आहुति दे, होकर सफल महान,
बापू—जग के सन्त, कर चुके—
प्राप्त महा निर्वाण।
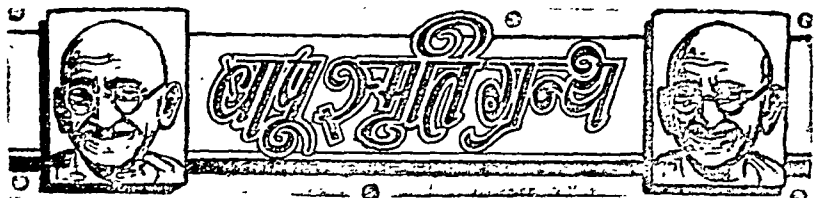
—श्री प्रकाश 'वनवासी'

विस्मृत न कभी कर पायेंगे, बापू! तुमको भारत के जन।

हा! कौन सुनायेगा हमको
अब विश्व-प्रेम की मृदु-वाणी?
दुख दैन्य दूर कर कौन हमें
अब देगा सन्मति कल्याणी?
किसके अमृत वचनों को सुन
उत्फुल्लित हो जायेगा मन?
विस्मृत न कभी कर पायेंगे
बापू! तुमको भारत के जन।

अब कौन बसायेगा फिर से
पावन कर से हरिजन कुटीर?
हा! कौन करेगा पथ प्रशस्थ
जब हम हो जायँगे अधीर?
होंगे किस दर्शन को आकुल
ये अश्रु-सिक्त अनुरक्त नयन?
विस्मृत न कभी कर पायेंगे
बापू! तुमको भारत के जन!

जब तक नभ में रवि-शशि तारे
गंगा जमुना में है पानी,
प्रतिध्वनित अवनि अम्बर में है
तब तक तेरी मृदुमय वाणी।
रघुपति-राघव की जयध्वनि ही
भर देगी हम में नव-जीवन!
विस्मृत न कभी कर पायेंगे
बापू! तुमको भारत के जन।

—श्री गणेशदत्त 'इन्द्र'

जितने जग के महा महिम
मानव महात्मा देव,
विद्यमान थे सब के तुम में
गुण स्वभाव स्वयमेव।
तुम सत, तुम थे चिदानन्द, तुम अप्रमेय संभूत,
शान्ति-यज्ञ के होता थे तुम, विश्व-शान्ति के दूत।

तुम प्रलयंकर शंकर थे
स्रष्टा थे जग के इष्ट,
विष्णु सदृश भव-पालक थे
मृत्युञ्जय देव वरिष्ट।

ईश्वर बन मानव आया था, अविनश्वर साकार,
अविचर एक-निष्ठ सुसंस्थित, भारत प्राणाधार।
ध्रुव, प्रह्लाद, वेणु, बलि, वामन
अम्बरीष, शुक, व्यास,
सब के तप-गुण-गण का तुम में
दिखता था आभास।

तुम शंकर थे, तुम रामानुज
तुम्ही वल्लभाचार्य,
तुम वैष्णव थे, शैव शाक्त थे
तुम थे सच्चे आर्य।
तुम में बापू! जाग रही थी, वह प्रताप की ज्योति,
तुम में बापू! उद्भासित थी, वीर शिवा की ज्योति।

तुम में बापू व्यापक था
गुरु गोविन्द का भी रक्त,
भारत, भारतीय संस्कृति के
तुम थे सच्चे भक्त।

गा ववर तुम, वीति-क्रोध, मद-मत्सर-गत, निष्काम
हे विदेह! तेरे चरणों में, शतधा प्रणत प्रणाम!
हे भारत के युग-निर्माता
पूर्णांश अवतार
तेरे पाद-पद्म में बापू!
है प्रणाम शत बार।

—कुमारी 'मृणाल' मलहोत्रा

आज अहिंसा के मन्दिर का
दीप यहाँ निर्वाण हुआ है,
सत्य-ज्योति का तेज-पुञ्ज वह
सहसा अन्तर्ध्यान हुआ।

हम ही नहीं विश्व रोता है
यह गान्धी सा रत्न गँवाकर;
माँ भारती अधीर हुई है
भारत का सौभाग्य लुटाकर।

जग अस्थिर है, देह विनश्वर
रहा यही विधि का विधान है,
पर बापू को अमर कर गया
जग में उनका ही प्रयाण है।

कुटियों, प्रसादों में गूँजी
राष्ट्र-पिता हे गाँधी जय-जय!
'जन-मन-गण अधिनायक जय हे!
स्वतंत्रता के दाता जय-जय!

—श्री राजबहादुर आर्य 'पद्म'

टिमटिमा युगों से रहा, साधना-समाधि पर
बुझा हुआ देश-दीप फिर जले, फिर जले!
विश्व की विभूति मानवत्व की स्फूर्ति मंजु,
प्राण-दायिनी बनी, अवतरे अवतरे!

बापू सो गये कि राष्ट्र का विधान सो गया,
आज नव-प्रभात का प्रकाश लुप्त हो गया।
डूब से गये हैं सभी हृदय शोक-सिन्धु में,
बिम्ब दीखता है म्लान, अश्रु-बिन्दु बिन्दु में।
देश अल्प-दर्शिता तुम्हें नहीं समझ सकी,
आज रत्न-हीन वही, रो रही खड़ी खड़ी

कल्पवृक्ष बिन विहँग चहचहायेंगे कहाँ?
असंख्य वर्ष क्लेश में गुजारते गुजारते।
टिमटिमा युगों से रहा साधना समाधि पर
बुझा हुआ देश-दीप फिर जले फिर जले!

शुष्क चर्म में लपेट अस्थियों का पींजरा,
मानव विमुक्ति के लिये थे चले देवता।

जरा-जीर्ण मूर्ति एक शीर्ण लकुटिया लिये,
दल दलों में कण्टकों में जा रही थी वेग से।
बढ़ी गई वह निशंक सत्य को सहेजने,
मार्ग से विरक्त मानवत्व को प्रसंचने।

साम्प्रदायिकत्व के प्रभंजनों में भी प्रगति
हटी नहीं हिंसा के प्रचार से विचार से।
टिमटिमा युगों से रहा साधना-समाधि पर,
बुझा हुआ देश-दीप फिर जले फिर जले।

सूत कात-कात कर रची नवीन योजना,
देश सेवकत्व की, विमुक्ति की विवेचना।
तुम जिये सदैव देश-दीनों के त्राण को,
अन्त बलि चढ़ा दिया इसीलिये स्वप्राण को।
धूल से हमें निकाल, धूल में मिला गये,
शान्ति-दूत पूर्ण शान्ति-सिन्धु में समा गये।

ये स्वतंत्रता बसन्त आरती लिये खड़े
कोई उठ जरा उन्हें पुकारले: पुकारले
टिम टिमा युगों से रहा साधना-समाधि पर
बुझा हुआ देश-दीप फिर जले फिर जले।

सुश्री कमल व्यास

टूट गया है आज हमारे
भाग्य-गगन का तारा,
आच्छादित है त्रिभुवन में
यह घोर आज अँधियारा।

जिसका प्रखर प्रकाश महीतल पर प्रसरित होता था,
जिसको देख सभी हँसते, कोई न कभी रोता था।
आज सभी को छोड़ विकल
वह बापू स्वर्ग सिधारा।
टूट गया है आज हमारे
भाग्य-गगन का तारा।
जो मानव मानव में कोई भेद नहीं पाता था,
दीनों को दयनीय देख, जिसका उर भर आता था,

गूँज रहा है आज उसी के
सत्य-प्रेम का नारा
टूट गया है आज हमारे
भाग्य-गगन का तारा

—श्री हरीकृष्ण भार्गव

तुम अजर अमर हे विश्व देव !
तुमको है शत-शत, नमस्कार !
तुम शान्ति-दूत थे स्वयं और
सच्चे अर्थों में कलाकार

इस भीषण अणु युग में तुमने
कर सत्य अहिंसा का प्रसार,
मानवता को वरदान दिया
मानव को तुमने किया प्यार।

तुम भारतमाता के सपूत
जननी की आँखों के तारे,
लख आज तुम्हारा दुखद अन्त
पीड़ित जगती के जन सारे।

अन्तर का सिन्धु उमड़ता है
नयनों के निर्झर बहते हैं,
'बापू तुम सचमुच थे महान'
हम आज यही सब कहते हैं।

—श्री अमर वर्मा

जब कोई संध्या बेला में
रघुपति-राघव ध्वनि गाता है,
यमुना के राजघाट पर जब
कोई जन आग जलाता है;
जब सत्य अहिंसा कर्म योग
की कोई बातें बतलाता,
भारत के लाल किले पर जब
ध्वज यहाँ तिरंगा फहराता,
बापू तब हमें याद आता है

जब गौतम, ईसा, राम कृष्ण
का कोई नाम सुनाता है;
जब कोई पूछे कहो कौन
भारत का भाग्य-विधाता है?
दुख की अँधियारी रातों में
जब कोई हँसता मुस्काता,
जब हाड़ माँस का मानव ही
मानव से ऊँचा उठ आता,
बापू तब हमें याद आता।

—श्री गौरीशंकर श्रीवास्तव

निर्वाण अहिंसा का हिंसा—
से, हृदय रो उठे कोटि साथ,
तुम अमर हुये, हो गये विश्व
के कोटि-कोटि मानव अनाथ।

लज्जित मानवता हुई, महामानव
पर कर घातक प्रहार,
तुम आज सौ गुने चमक उठे
मन-मन में पार्थिव त्याग भार।

नासमझी के तूफानों में
हमने सब कुछ खो दिया आज,
मझधार छोड़कर असमय में
डूबा मानवता का जहाज।

पद-चिह्नों की स्मृति पर जो
अनुकरण गर्व है सदा शेष,
युग-पुरुष! उन्हीं अक्षय चरणों
में अर्पित अभिवादन अशेष।

—श्री राजेन्द्र सक्सेना

हे राष्ट्र-पिता !
हे राष्ट्र प्राण !
तुम मानवता के चिर पोषक
तुम जन-जन की आलोक किरण,
तुम जीवन-पथ के चिर प्रकाश
तुम में अंतर्हित ज्योति-पुंज।
अभिशप्त विश्व की तुम आशा
तुम कोटि-कोटि कण्ठों के स्वर,
तुम पीड़ित, शोषित के सम्बल
तुम कितने हृदयों की धड़कन।

तुम युग की गति
युग - निर्माता
तुम हो महान, अतिशय महान,
शत-शत वन्दन, शत-शत प्रणाम !
तुम हो गौतम, तुम महावीर,
तुम ईसा और मुहम्मद तुम,
तुम हो महर्षि, तुम हो मुनीन्द्र,
तुम सत्य अहिंसा मूर्त्ति स्वयं।
तुम वेदों की गरिमा विराट,
तुम गीता के हो अमर ज्ञान,
समता के हो तुम अग्रदूत,
जन-समता तुम में आत्म-सात्।

तुम एक बिन्दु
पर महा सिन्धु
हे सत्य-पथिक ! हे दीप्यमान !
शत-शत वन्दन शत-शत प्रणाम !

○

तुम अचल हिमालय से अजेय
गंगा यमुना के पावन जल,
भारत-गौरव संस्कृति – उद्गम,
तुम विश्व-प्रेम, तुम विश्व बन्धु।
कुत्सित बर्बरता हिंसा के,
विष का शिव सम कर गये पान,
सब पाप आसुरी-अनाचार,
कर गये जगत के भस्मसात्।

हे अजर - अमर !
हे विमल सुयश।
मुक्तात्मा ! महिमा मय महान।
शत-शत वन्दन शत-शत प्रणाम।
बापू महान !
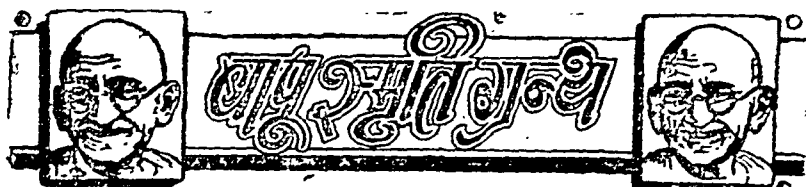
श्री रामजीशरण सक्सेना

जब कि विजयोन्माद से था एक दिन यह देश मस्त,
गर्व से हमने मनाया था कभी पन्द्रह अगस्त,
एक दिन स्वाधीनता का रुक गया था जब समर,
अस्त्र रखकर खोलदी थी जब कि वीरों ने कमर,
झाँकते थे स्वर्ण-युग के, स्वप्न जब दृग-द्वार से,
देश का यह सुख नहीं देखा गया संसार से;
अन्त आया भी न था स्वाधीनता के वर्ष का।
अस्त सहसा हो गया, दिनमान भारतवर्ष का॥

इस दुखद संवाद से फैली जगत में खलबली,
कौन से दृग थे न जिनसे अश्रु धारा बह चली,
हिन्दुओं के देवता, इस्लाम के थे ये वली,
दीन के आश्रय, दलित के, भग्न उर की वेकली,
विश्व-मानव-धर्म में उनकी विमल काया ढली,
दी उन्हें संसार ने सद्भाव से श्रद्धाँजली,
लय हुआ चिर-चेतना में प्राण-प्यारा हिन्द का।
डूब सकता ही नहीं उज्ज्वल सितारा हिन्द का॥
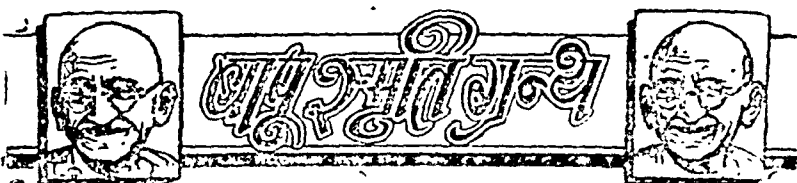
धर्म होकर तर्क थे, वे भक्ति होकर ज्ञान थे,
विश्व की गति थे सुमति, वे जीव के कल्याण थे,
देव थे संसार में देवत्व की पहिचान थे,
बुद्ध थे वे या कि ईसा के पुनर्बलिदान थे;
विश्व की वे सम्पदा थे, विश्व के वे प्राण थे,
किन्तु कहने के लिये इस देश की सन्तान थे;

आज दुनिया में तुम्हारे नाम का सम्मान है।
तुम हमारे थे हमें इस बात का अभिमान है।

वे हमारी भाग्य-नौका के कुशल-तम कर्णधार,
वे हमारी राष्ट्र-सत्ता के सकल सर्वाधिकार,
वे हमारे राष्ट्र के रवि, राष्ट्र के मन की पुकार,
वे नहीं तो आज भारतवर्ष में है अन्धकार,
मौत सी छाई हुई है लुप्त सा है सृष्टिकार,
कह रहा है आज सारा देश रोकर बार-बार;

क्षुद्र मानव देह में अवतार सत्यादर्श के।
मौन तुम क्यों हो गये भगवान भारतवर्ष के?

—श्री 'उपमन्यु'

युग-युगों के बन्धनों से,
मुक्ति का दे दान तुमने,
कर लिया सहसा विषमता
का सभी विष-पान तुमने।

देश के अगणित उरों पर
था रहा अधिकार बापू!
सत्य के साकार थे तुम
शान्ति के अवतार बापू!

तुम बिना ये प्राण कैसे?
मुक्त जीवन-गान कैसे?
विजय का सम्मान कैसे?
स्वत्व पर अभिमान कैसे?

स्वर्ग की भी चाह कैसे
तुम बिना स्वीकार बापू!
अहिंसा-आधार बापू
सत्य के साकार पूषा!

—श्री महेन्द्र रायजादा

आज दुःख की प्रबल घटायें घिरीं गगन में,
आज व्यथा चालीस कोटि जन-जन के मन में।
बुद्धि हमारी आज हो गई है अति कुण्ठित,
आज हृदय पीड़ा से उन्मन व्याकुल विचलित।
दुर्गम आज वेदना का सागर लहराता,
अन्तस्तल में शोक समाये नहीं समाता।

थमती नहीं आँसुओं की यह अविरल धारा,
बिछुड़ गया हा! आज हमारा बापू प्यारा।
पीड़ित, शोषित, मजलूमों का जो था सम्बल,
दीन-हीन असहायों का जो था जीवन-बल।
मृत भारत में जो नव-जीवन-प्राण भर गया,
आज देश हित निज जीवन बलिदान कर गया।

यदि हम बापू के पथ के सच्चे अनुयायी,
तो समझेंगे सदा सभी को भाई-भाई।
तभी मिलेगी शान्ति आज उस दिव्यात्मा को,
सत्य अहिंसा के प्रतीक उस विश्वात्मा को।
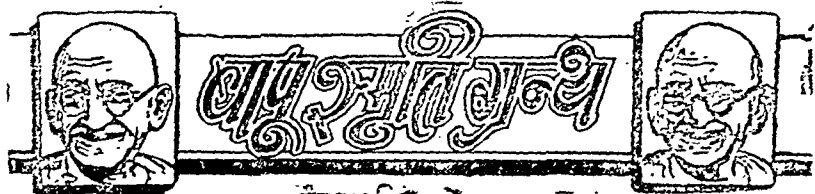
—श्री अजीतसिंह वर्मा

तुमको शत-शत वन्दन बापू!
युग-युग के अवतारी तुमको, श्रद्धा से अभिनन्दन बापू!
तुमको शत-शत वन्दन बापू!

संध्या की अँधियारी आई, उसने जीवन-ज्योति बुझाई,
हुई रक्त-रंजित क्षण भर में, जीवन भर की आज कमाई।
खोकर पावन ज्योति तुम्हारी, भारत करता क्रन्दन बापू!
तुमको शत-शत वन्दन बापू!

जहाँ तुम्हारा रक्त गिरा है, बनी तीर्थ वह पावन धरणी,
सत्य, अहिंसा और त्याग की, कहलायेगी वह वैतरणी,
और बनी पद-धूलि तुम्हारी, भक्तों को नयनाञ्जन बापू!
तुमको शत-शत वन्दन बापू!

अमर-शान्ति-सन्देश सुनाती, रघुपति-राघव-तान तुम्हारी,
क्षमा-दान का वर्षण करती थी मृदु मुख-मुस्कान तुम्हारी,
व्याल भले ही लिपटें लेकिन चन्दन तो चन्दन ही बापू!
तुमको शत-शत वन्दन बापू!

—श्री सुरेन्द्र कुमार दीक्षित 'सुकुमार'

पद-दलितों के बन गये त्राण।
परित्यक्तों के तुम चिर-सहचर
तुम जीर्ण जाति के जीवन वर
हे आत्म जयी! हे देश प्राण!

शत दर्शन, मत, विज्ञान, ज्ञान,
आयोजित करके रक्त-समर
भास्वर करने मानव अन्तर
दे गये स्वयं तुम रक्त-दान।

हो क्षमा युक्त जग-जीवन-नभ,
उस रक्त-लालिमा से निर्मल
इस कर्दम में खिल नव शत-दल
दिशि-दिशि में भर दे नव सौरभ।

हो धर्म नीतियों में समत्व।
जन-जन में अकलुष स्नेह अथक
बलिदान तुम्हारा हो सार्थक
मानव में जागे मनुजत्व।

—श्री 'शिव' उपाध्याय

हे शुभ संस्कृति—

के जीवन!

जन-जाग्रति के हे अग्रदूत!

नैराश्य-दैन्य-दुख-महाकाल!

भारत माता के प्रिय सपूत!

हे सत्य-अहिंसा—

के प्रतीक!

हे ज्ञान-राशि के साध्य देव!

प्रतिविम्ब बुद्ध ईसा के हे!

मानवता के आराध्य देव!

सन्देश तुम्हारा—

राष्ट्र-पिता!

कर देगा नूतन शान्ति सृजन,

सुख-स्रोत अमर बन जायेगा

हे देव!! तुम्हारा दुखद-निधन।

—श्री श्रीलाल 'भानु'

कहाँ हैं वे आमोद प्रमोद ?
प्राप्त थे जो पहले कुछ मास,
नहीं उर में अब रंचक हर्ष
नहीं अब पहले के उल्लास।

बहे अब कैसे हर्ष-प्रवाह
हृदय का स्रोत हुआ जल-हीन,
उठे जलनिधि में कैसे ज्वार ?
तरंगें भी तो हुईं विलीन।

कहाँ से मिले हृदय को शान्ति ?
शान्ति ही हो जब अन्तर्ध्यान,
कहाँ से उठे विनोदी गान ?
लुप्त हो चुकी यहाँ सब तान।

नहीं अब स्नेह पूर्ण वह दीप
दिखाया जिसने पथ अनुकूल,
गये असमय में मुरझा आज
कि जीवन के वे प्यारे फूल।

—श्री 'मधुप'

यह न अस्थियाँ हैं बापू की
भारत की पतवार चली है,
और न यह अर्थी थी उस दिन
जो यमुना के पार जली है।
उसे न मानव का शव समझो
युग-युग का गौरव जलता था,
हड्डी के जर्जर ढाँचे में
भारत का सौरभ जलता था।

क्षण भर और रहा होता जो
ज्योतिर्मय संसार हमारा
तो न भूलता चपल लहरियो!
यह जीवन आभार तुम्हारा।
सौंपी भारत माँ ने तुमको
यह अपने जीवन की थाती,
इसे सँभाले रहो त्रिवेणी!
फटे न माँ की कोमल छाती।

—श्री मोहनलाल गुप्त

हे बापू ! शत-शत नमस्कार !

जब तुम आये यह भारत तब, अति दीन-हीन था निर्बल था,
यह मातृभूमि थी पराधीन, तब पास न कोई सम्बल था,
तुम शक्ति-भक्ति के साथ मुक्ति
ले आये सुन माँ की पुकार।
हे बापू शत-शत नमस्कार !

कर्मठता के हे महापुरुष ! हे ज्ञानी गुरुवर देवदूत !
हे सत्य मार्ग के महापथिक ! भारत माँ के सच्चे सपूत !
है तव प्रकाश से ज्योतिवंत
भारत का घर-घर द्वार-द्वार !
हे बापू शत-शत नमस्कार !

सब कुछ खोकर हो गई रिक्त, जब थी मानवता की झोली,
दुर्दम तूफानों में फँसकर, जब जीवन की नौका डोली,
हे देव ! तुम्हीं बन आये तव
डगमग नौका के कर्णधार
हे बापू ! शत-शत नमस्कार !

—श्री गौरीशङ्कर द्विवेदी 'शङ्कर'

संघर्षों में सुख - दुक्खों में
जिन्हें शान्त जग ने पाया,
मुक्त कण्ठ से विरोधियों ने
जिनका गुण - गौरव गाया,

अखिल विश्व में गूँज रही है
जिनके उपदेशों की धूम,
जन-जन था कृतकृत्य मानता
जिनकी चारु चरण रज चूम,
पतितों को पावन करने को
जपने को उस हरि का नाम,
सिद्ध कर दिया मंत्र सफल यह
रघुपति - राघव - राजा - राम।

जिये हमारे हित जग में जो
हुये हमारे हित बलिदान,
कब पायेगा विश्व अहो अब
ऐसा फिर नर श्रेष्ठ महान।

—श्री सेवकेन्द्र त्रिपाठी

वह बापू जिसने मानवता पाठ पढ़ाया
और हमें दासत्व गर्त से शिखर चढ़ाया,
जिसके बल से हम स्वतंत्र जग में कहलाये
अगणित अवनत भाल कि जिसने यहाँ उठाये,

जिसने बाँधी सत्य अहिंसा की भी सीमा
जिसका ज्योतित स्नेह-दीप हो सका न धीमा,
जिसका तप बल ही अगस्त पन्द्रह ले आया
सप्त सिन्धु की गुप्त एक भी चली न माया,

उन्नत हिमगिरि भाल गर्व से सागर लहरा
हिमसे कन्याअटक कटकतक निजध्वज लहरा,
प्रहर तीसरा तीस जनवरी अड़तालिस सन
जब कि विश्व-सौभाग्य-गगन पर घिरे कालघन,

द्वय सहस्त्र चत्वार अब्द विक्रम संवत्सर
माघ पंचमी, कृष्ण पक्ष में था भृगुवासर,
यह असत्य जग छोड़ सत्य से नाता जोड़ा
'राम राम हे राम' कहा नश्वर जग छोड़ा।
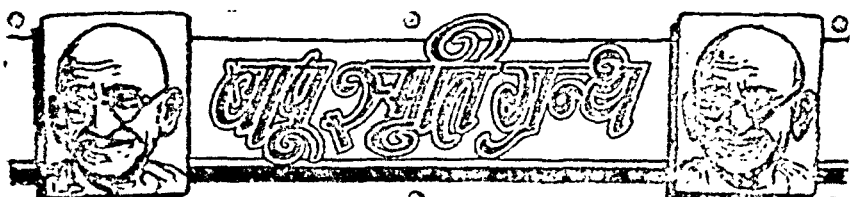
—श्री सी० वि० ताटके

बापू ! तुम भारत के घन थे
करुणा के भण्डार,
दीनों के थे बन्धु, पीड़ितों
दलितों के उद्धार।

तुम ही ने था दिया मुक्ति का
मंगल स्वर्ण-विहान,
दिया तुम्हीं ने तो था हमको
मुँह-माँगा वरदान।

तुम जन-जन के जीवन थे
हे देव ! दया के धाम !
है अभिलाषा, रहे तुम्हारा
युग-युग पावन नाम।

सत्य-अहिंसा-शान्ति-स्नेह-व्रत
का हो पूर्ण विकास,
मानव का हो ध्येय यही
हो यही अटल विश्वास।

—सुश्री शकुन्तला कुमारी 'रेणु'

नमन.......! 'राम हे राम' हुई ध्वनि
और पूज्य ढल गये धरा पर,
जन्म मात्र में मृत्यु निहिति है
अमर सत्य, आत्मा अविनश्वर।

सरल, शान्त मुस्कान वदन पर
तुम ससीम निस्सीम हो गये,
मर कर अमर हुये तुम बापू!
जीते जी हम, हाय! मर गये।

तुम आये हँस उठी धरा, हँस—
उठा हिन्द का भाग्य-सितारा,
टूटे माता के सब बन्धन
हुआ देश स्वाधीन हमारा।

सत्याग्रह की अक्षय-निधि तुम
यहाँ धरोहर रूप धर गये।
मर कर अमर हुए तुम बापू!
जीते जी हम हाय! मर गये।

जन-सेवा में प्रभु सेवा का
सच्चा मानव - धर्म बताया,
सत्य, अहिंसा, प्रेम, साम्य का
तुमने शाश्वत पथ अपनाया!

जग-मग-ज्योति धरा की होकर
जग में फिर आलोक भर गये।
मर कर सदा अमर तुम बापू!
जीते जी हम हाय! मर गये।

आज बिलखते राष्ट्र-प्राण हैं—
'कहाँ! कहाँ! हा! पिता हमारा?
धधक उठी प्राणों में होली
कहाँ हमारा सुदृढ़ सहारा?

किन्तु, अमर पद-चिह्न छोड़ तुम
मंगल - मार्ग प्रशस्त कर गये।
हुये अमर मर कर तुम बापू!
जीते जी हम हाय! मर गये।

—श्रीकृष्ण 'सरल'

स्वर्गवासियो! स्वागत के हित
सावधान हो जाओ!
पवन-पंथ में पलक-पाँवड़े
अपने पुलक बिछाओ!

धरती का शृंगार आज, आता है स्वर्ग तुम्हारे,
देवो! आज लगाओ तुम भी, उसकी जय के नारे।
हुई प्रतीक्षा सफल तुम्हारी, यह शुभ दिन आया है,
आज तुम्हारा पुण्य-कल्पतरु, पावन फल लाया है।

मानव तो रोता है, पर तुम
गाओ! मोद मनाओ!
स्वर्गवासियो! स्वागत के हित
सावधान हो जाओ!

वाणी का वरदान आज जाता
है नभ को भू से,
एक वीर है विलग हो रहा
अपनी वीर-प्रसू से।

कोटि-कोटि जन आज यहाँ के, देते उसे विदाई,
कोटि-कोटि नयनों में गंगा, जमुना बनकर आई।
कोटि-कोटि कण्ठों के स्वर को, तुम संगीत बनाओ!
स्वर्गवासियो! स्वागत के हित सावधान हो जाओ!

यह मानव था जिसमें
देवों का देवत्व ढला था,
पीड़ित, दीन-दुखी, दलितों का
जिसमें प्यार पला था,

जिसके नयनों में अंकित थी, अन्तर की परिभाषा
जो तूफानों में प्रकाश-पथ की देता था आशा।
तुम इस ज्योति पुञ्ज को अपने नभ का भानु बनाओ!
स्वर्ग वासियो! स्वागत के हित सावधान हो जाओ!

यह तुमको सुन्दर समत्व का
सत्पथ दिखलायेगा,
पर-पीड़ा पर भी ममत्व
यह रखना सिखलायेगा,

इस मंजुल विभूति को तुम, अपने पलकों पर रखना!
इसके सुधा-सिक्त वचनों को तुम कानों से चखना!
अपने उर के भेद-भाव को अब तो दूर भगाओ!
स्वर्गवासियो! स्वागत के हित सावधान हो जाओ!

तुम सुर हो, संग्राम सदा
असुरों से करते आये,
हिंसा के रक्तिम प्रहार कर
तुम विजयी कहलाये

किन्तु तुम्हें नव रक्त-हीन-जन-क्रान्ति सिखायेगा यह,
शुद्ध अहिंसा का प्रशस्त-पथ, तुम्हें दिखायेगा यह,
इसके आदर्शों को तुम, अपने आदर्श बनाओ!
स्वर्गवासियो! स्वागत के हित सावधान हो जाओ!

देवराज ! क्यों चिन्तित हो तुम ?
इन्द्रासन न छिनेगा,
यह त्यागी त्रिभुवन का वैभव
तृण के सदृश गिनेगा।

यह तो राज्य बाँटता आया, स्वयं नहीं अभिलाषी;
अर्धनग्न रह स्वयं, कोटि तन ढँकने का अभ्यासी।
सिंहासन पर नहीं इसे हृदयासन पर बैठाओ !
स्वर्गवासियो ! स्वागत के हित सावधान हो जाओ !

स्नेह-दीप लेकर श्रद्धा से
तुम आरती उतारो !
कण्ठों में कोमलता भरकर
जय-जय-कार पुकारो !

यह जन-त्राता उस जग का भी, जीवन-प्राण बनेगा
स्वागत करो, तुम्हारा भी यह, शुभ सम्मान बनेगा
मृदु-भावों के सुमन चयन कर, मन के महल सजाओ !
स्वर्गवासियो ! स्वागत के हित सावधान हो जाओ !

मृदुल समीरण! साथ-साथ तुम
रथ के चलती जाओ!
सुरभि-कणों से गगन-पंथ को
सुरभित करती जाओ!

पवन देव! तुम धीरे-धीरे रथ को हाँक चलाओ!
राम नाम संगीत मधुर स्वर से तुम गाते जाओ!
शीतल छाँह करो तुम ऊपर, सजल मेघ मालाओ!
स्वर्गवासियो! स्वागत के हित सावधान हो जाओ!
पवन-पंथ में पलक पाँवड़े, अपने पुलक बिछाओ!

यह तुमको सुन्दर समत्व का
सत्पथ दिखलायेगा,
पर-पीड़ा पर भी ममत्व
यह रखना सिखलायेगा,

इस मंजुल विभूति को तुम, अपने पलकों पर रखना!
इसके सुधा-सिक्त वचनों को तुम कानों से चखना!
अपने उर के भेद-भाव को अब तो दूर भगाओ!
स्वर्गवासियो! स्वागत के हित सावधान हो जाओ!

तुम सुर हो, संग्राम सदा
असुरों से करते आये,
हिंसा के रक्तिम प्रहार कर
तुम विजयी कहलाये

किन्तु तुम्हें नव रक्त-हीन-जन-क्रान्ति सिखायेगा यह,
शुद्ध अहिंसा का प्रशस्थ-पथ, तुम्हें दिखायेगा यह,
इसके आदर्शों को तुम, अपने आदर्श बनाओ!
स्वर्गवासियो! स्वागत के हित सावधान हो जाओ!

देवराज ! क्यों चिन्तित हो तुम ?
इन्द्रासन न छिनेगा,
यह त्यागी त्रिभुवन का वैभव
तृण के सदृश गिनेगा।

यह तो राज्य बाँटता आया, स्वयं नहीं अभिलाषी;
अर्धनग्न रह स्वयं, कोटि तन ढँकने का अभ्यासी।
सिंहासन पर नहीं इसे हृदयासन पर बैठाओ!
स्वर्गवासियो ! स्वागत के हित सावधान हो जाओ!

स्नेह-दीप लेकर श्रद्धा से
तुम आरती उतारो!
कण्ठों में कोमलता भरकर
जय-जय-कार पुकारो!

यह जन-त्राता उस जग का भी, जीवन-प्राण बनेगा
स्वागत करो, तुम्हारा भी यह, शुभ सम्मान बनेगा
मृदु-भावों के सुमन चयन कर, मन के महल सजाओ!
स्वर्गवासियो ! स्वागत के हित सावधान हो जाओ!

मृदुल समीरण! साथ-साथ तुम
रथ के चलती जाओ!
सुरभि-कणों से गगन-पंथ को
सुरभित करती जाओ!

पवन देव! तुम धीरे-धीरे रथ को हाँक चलाओ!
राम नाम संगीत मधुर स्वर से तुम गाते जाओ!
शीतल छाँह करो तुम ऊपर, सजल मेघ मालाओ!
स्वर्गवासियो! स्वागत के हित सावधान हो जाओ!
पवन-पंथ में पलक पाँवड़े, अपने पुलक बिछाओ!